वर्ष : 12 अंक : 10 अक्टूबर, 2014 ₹ 10

सामाजिक न्याय संदेश

समतावादी विचार का संवाहक

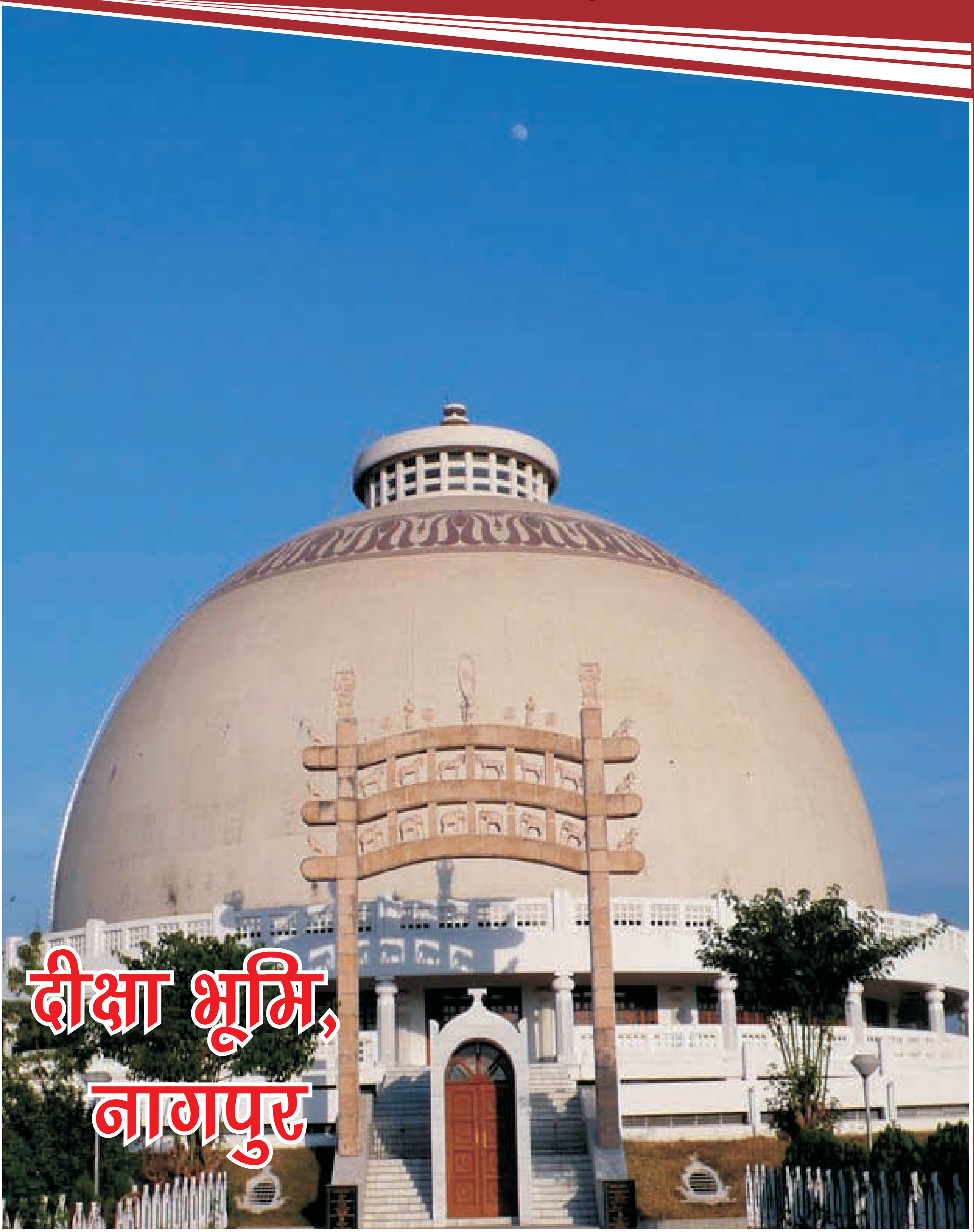

दीक्षा भूमि, नागपुर

सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्री एवं डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान की शासी निकाय के अध्यक्ष श्री थावरचंद गेहलोत प्रतिष्ठान की शासी निकाय की बैठक को सम्बोधित करते हुए।

डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान राष्ट्रीय निबंध प्रतियोगिता के पुरस्कृत छात्र-छात्राओं के साथ सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्री एवं प्रतिष्ठान के अध्यक्ष श्री थावरचंद गेहलोत, मंत्रालय के सचिव श्री सुधीर भार्गव, श्रीमती स्तुति कक्कड, मंत्रालय के विशेष सचिव श्री अनूप कुमार श्रीवास्तव, संयुक्त सचिव एवं प्रतिष्ठान के सदस्य सचिव श्री संजीव कुमार।

सामाजिक न्याय संदेश

समतावादी विचार का संवाहक

वर्ष : 12 ★ अंक : 10 ★अक्टूबर 2014 ★ कुल पृष्ठ : 60

सम्पादक
सुधीर हिलसायन

सम्पादक मंडल
चन्द्रवली
प्रो. शैलेन्द्रकुमार शर्मा
डॉ. प्रभु चौधरी

सम्पादकीय कार्यालय
सामाजिक न्याय संदेश
डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान
15 **जनपथ, नई दिल्ली**-110001
सम्पादकीय सम्पर्क **011-23320588**
सब्सक्रिप्शन सम्पर्क 011-**23357625**
मोबाईल : 07503210124
फैक्स : 011-23320582
ई.मेल : hilsayans@gmail.com
editorsnsp@gmail.com
वेबसाईट: www.ambedkarfoundation.nic.in
(सामाजिक न्याय संदेश उपर्युक्त वेबसाईट पर उपलब्ध है)

व्यापार व्यवस्थापक
जगदीश प्रसाद

प्रकाशक व मुद्रक **जी.के. द्विवेदी**, निदेशक (डॉ.अ.प्र.) द्वारा डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान (सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय, भारत सरकार) के लिए इंडिया ऑफसेट प्रेस, ए-1, मायापुरी इंडस्ट्रियल एरिया, फेज-I, नई दिल्ली 110064 से मुद्रित तथा 15 जनपथ, नई दिल्ली-110001 से प्रकाशित व **सुधीर हिलसायन**, सम्पादक (डॉ.अ.प्र.) द्वारा सम्पादित।

सामाजिक न्याय संदेश में प्रकाशित लेखों/रचनाओं में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। प्रकाशित लेखों /रचनाओं में दिए गए तथ्य संबंधी विवादों का पूर्ण दायित्व लेखकों /रचनाकारों का है। यह आवश्यक नहीं कि सरकारी दृष्टिकोण भी वही हो। पत्रिका में प्रकाशित विज्ञापनों की विषय-वस्तु के लिए भी सामाजिक न्याय संदेश उत्तरदायी नहीं है। समस्त कानूनी मामलों का निपटारा केवल दिल्ली/नई दिल्ली के क्षेत्र एवं न्यायालयों के अधीन होगा।

RNI No. : DELHIN/2002/9036

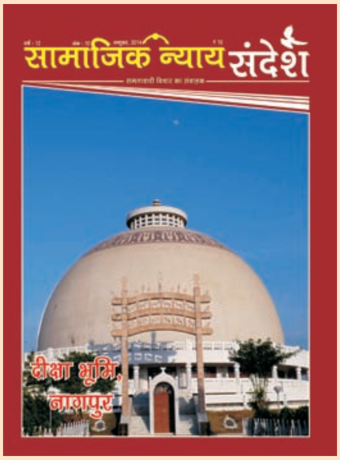

इस अंक में

❖ सम्पादकीय/दीक्षा भूमि नागपुर		3
❖ गोलमेज सम्मेलन में डॉ. अम्बेडकर		4–9
❖ प्रधानमंत्री का सफाई अभियानः जाति व्यवस्था पर प्रहार	उपेन्द्र प्रसाद	12–13
❖ हम खुद लिखेंगी अपना इतिहास	अनिता भारती	14–18
❖ महापुरुष के बत्तीस लक्षण (शारीरिक चिन्ह)	डॉ. सत्येन्द्र कुमार	21–23
❖ स्वच्छ भारत अभियानः स्वर्णिम पहल	डॉ. आर.एम.एस. विजयी	24–26
❖ भारत के आदि कवि महर्षि बाल्मीकि	रोहित कुमार	27–28
❖ लोक प्रशासन, पुलिस एवं जन सहभागिता	कैलाशनाथ गुप्त	29–33
❖ प्रेमचन्द के उपन्यासों में दलित विमर्श	नीलम	34–36
❖ उपन्यास अंश/अछूत	मुल्क राज आनन्द	37–45
❖ गिरोह	रजतरानी 'मीनू'	46–50
❖ पुस्तक अंश/डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर– जीवन चरित	धनंजय कीर	51–56
❖ कविता/सामाजिक न्याय	दीपक कुमार	57

ग्राहक सदस्यता शुल्क : वार्षिक ₹ 100, द्विवार्षिक : ₹ 180, त्रैवार्षिक : ₹ 250
*डिमांड ड्राफ्ट/मनीऑर्डर **डॉ. अम्बेडकर फाउन्डेशन**, 15 जनपथ, नई दिल्ली-110001 के नाम भेजें। चेक स्वीकार नहीं किए जाएंगे।*

सम्पादक के नाम पत्र

जातिप्रथा का अर्थ

सम्पादक महोदय,

महोदय जी 'सामाजिक न्याय संदेश' पत्रिका में बहुत ही स्पष्ट तरीके से जैसे कि दर्शाया गया:- बाबासाहेब के दृष्टिकोण से भारत में जातिप्रथा का अर्थ है एक ही प्रजाति के लोगों का सामाजिक विभाजन अर्थात् समाज को ऐसे कृत्रिम हिस्सों में विभाजित करना जो रीति-रिवाजों और शाही व्यवहार की विभिन्नताओं से बंधे हो! जाति प्रथा की उत्पत्ति के विभिन्न सिद्धांत जैसे-परम्परागत पेशा, रक्त की शुद्धता, धर्म और रोटी-बेटी के प्रतिबंध को माना गया है। यह सब पढ़कर और आपके द्वारा जानकर जो खुशी हर्ष मुझे प्राप्त हुआ है, इसके लिए मैं सदा आपका आभारी रहूंगा और बाबासाहेब के विचारों को प्रचारित-प्रसारित करने में अहम भूमिका निभाउंगा।

धन्यवाद

रामसिंह
रिटायर्ड कृषि विभाग, भूडबिसा बुलन्दशहर (उ.प्र.)

सत्ता जीवन

सम्पादक महोदय,

'सामाजिक न्याय संदेश' पत्रिका में जो दलित समाज के लोगों में जो दर्शाया गया, शिक्षा को लेकर, जाति को लेकर एवं गरीबी को लेकर यह सत्य जीवनी पर आधारित पत्रिका मुझे बेहद पसन्द आयी। पता चलता है कि बाबासाहेब ने अकेले इतना बड़ा बदलाव किया जिसकी बदौलत समाज में आज हम सभी लोग खुशी से जी रहे हैं। अगर आज इस पत्रिका को मैं पढ़ता हूं या कोई और भी पढ़ता है तो लगता है कि बाबसाहेब हमारे पास में बैठकर हमें शिक्षित बना रहे हैं, हमें सिखा रहे हैं!

हम सम्पादक का तहेदिल से स्वागत करते हैं और कोशिश करते हैं कि हम भी बाबासाहेब के विचारों को गांव-गांव, घर-घर तक पहुचाएं।

जय भीम, नमो बुद्धाय!

अलका कुमारी
मितनगर, दिल्ली

धर्म

सम्पादक महोदय,

'सामाजिक न्याय संदेश' पत्रिका में मैंने पढ़ा और जाना कि बुद्ध ने हिन्दुओं के सांस्कृतिक दोष का उपयोग धर्म के कुछ आचारों को शुद्ध करने के लिए किया। उसे नष्ट करने के लिए नहीं, परन्तु अपूर्ण को पूर्ण बनाने के लिए पृथ्वी पर आए। बुद्ध हमारे लिए इस देश में हमारी धार्मिक परम्परा का एक अलौकिक प्रतिनिधि हैं। तो हमें बाबासाहेब के साथ-साथ उनके विचारों को भी बताना चाहिए, क्योंकि बाबासाहेब भी उन्हीं को ज़्यादा मानते थे।

सम्पादक जी यह सच है कि आप जो लिखते हैं वह दिल को छू देने वाले शब्द होते हैं। मुझे यकीन है कि आप आगे भी इस पत्रिका को जन-जन तक पहुंचा कर इसी तरह हमारा हौसला बढ़ाते रहेंगे।

जय भीम, जय भारत।

सोनिया सिंह
बुलन्दशहर, उ.प्र.

जाति में अनजान

सम्पादक महोदय,

डॉ. अम्बेडकर एक ऐसे महान व्यक्ति हैं। जिनके जीवन और संघर्ष ने व्यक्तिगत रूप से मुझे प्रभावित किया है। जबसे मैंने होश संभाला, स्वयं को सामाजिक परिप्रेक्ष्य में एक अति विशिष्ट परिस्थिति में पाया। वह समय जब स्कूल की एक-एक सहपाठिनी स्वयं को ब्राह्मण या खत्री बताते हुए गौरवान्वित हुआ करती थीं, मैं अपनी जन्मजात सामाजिक स्थिति से अनजान होते हुए भी सहपाठिनियों द्वारा हीन स्थिति में धकेल दी जाती थी, क्योंकि उनकी तरह मैं अपनी वाचाल वाणी से स्वयं को ब्राह्मण या खत्री घोषित नहीं कर पाती थी। मुझे पता ही नहीं था कि मैं कौन हूं? धर्म जाति के अनुसार मैं किस श्रेणी में हूं?

गुंजन
फरीदाबाद (हरियाणा)

सम्पादकीय

दीक्षा भूमि, नागपुर

बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर जब 16 वर्ष के थे तो केलुशकर ने उन्हें बुद्ध की जीवनी भेंट की थी। 1945 तक के अपने 30 वर्ष के जीवन काल में उन्होंने अनुभव प्राप्त किए और उन्होंने अस्पृश्यों को शोषणवादी व्यवस्था से अलग करने के लिए बहुत सारे कार्यक्रम चलाए। 1945 में उन्होंने एक बौद्ध सम्मेलन में भाग लिया। 20 जून 1946 को उन्होंने 'पीपुल्स एजूकेशन सोसाइटी' की ओर से एक कॉलेज स्थापित किया, जिसका नाम सिद्धार्थ कॉलेज रखा गया। 1948 में उन्होंने एल. नरसू की पुस्तक '6 एसेस ऑफ बुद्धिज़्म' की प्रस्तावना लिखी। 1950 में दिल्ली में उन्होंने आधुनिक बौद्धों की प्रथम शोभा यात्रा में भाग लिया। दिसंबर 1954 में उन्होंने 'तीसरे अंतर्राष्ट्रीय बौद्ध' संघ में भाग लिया।

24 मई 1956 को उन्होंने बंबई में बुद्ध जयंती के दिन यह घोषणा की थी कि अक्तूबर के महीने में वे बौद्ध 'धम्म' की दीक्षा लेंगे। 23 सितंबर 1956 को उन्होंने एक प्रेस बयान में कहा कि वे नागपुर में दशहरे वाले दिन 14 अक्तूबर 1956 को सवेरे 9 बजे से 11 बजे के बीच बौद्ध धम्म स्वीकार करेंगे।

उन्होंने नागपुर ही क्यों चुना इस संदर्भ में अपने धम्म दीक्षा अभिभाषण में 15 अक्तूबर 1956 को उन्होंने कहा था– ''जिन लोगों ने बौद्ध धर्म के संबंध में इस देश के प्राचीन काल के इतिहास का अध्ययन किया है, उन्हें ज्ञात है कि बौद्ध धर्म को फैलाने का महान श्रेय नाग जाति के लोगों को है। नाग लोग आर्यों के कट्टर शत्रु थे। आर्यों और अनार्यों में आपस में कई बड़ी–बड़ी लड़ाइयां हुई आर्य लोग नाग लोगों को समूल नाश करना चाहते थे। उसी नाग के वंशज आप लोग हैं। जिन नागों को छल और कपट से पतित बनाया गया था, उन्हें उठाने के लिए एक महापुरुष की आवश्यकता थी। वह महापुरुष उन्हें तथागत गौतम बुद्ध के रूप में मिले। नागों ने ही सारे भारत में बौद्ध धम्म का प्रचार किया, आप उन्हीं नागों की संतान हैं। नागों की आबादी नागपुर में थी, इसी कारण इस नगर को नागपुर कहा गया। उस स्थान को चुनने के पीछे मेरी मंशा को आप समझ गए होंगे।''

14 अक्तूबर 1956 को सुबह 9 बजे अपने लाखों अनुयायियों के साथ नागपुर में उन्होंने बर्मा के 80 वर्षीय बौद्ध भिक्षु चन्द्रमणि महास्थविर ने बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर को त्रिशरण पंचशील का उच्चारण करवाकर बौद्ध धर्म की दीक्षा दी। डॉ. सविता अम्बेडकर, नागपुर हाईकोर्ट के भूतपूर्व न्यायाधीश भवानी शंकर नियोगी और औरंगाबाद के मिलिन्द कॉलेज के प्रिंसिपल चिटनिस व समाज के अन्य प्रबुद्ध जन आदि भी बौद्ध धम्म में दीक्षित हुए।

बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर मानते थे कि हम भारत के मूल निवासी हैं और हम किसी ऐसे धर्म को स्वीकार नहीं कर सकते जो हमारा भारत–प्रेम बांटकर या छीनकर विदेश में ले जाने का कारण बने। देश विदेश से दशहरे के दिन प्रतिवर्ष लाखों की संख्या में बाबासाहेब के अनुयायी दीक्षा भूमि, नागपुर में पहुंच कर अपनी श्रद्धा सुमन अर्पित करते हैं।

(सुधीर हिलसायन)

पुस्तक अंशः बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर सम्पूर्ण वाङ्मय खंड-5

गोलमेज सम्मेलन में डॉ. अम्बेडकर

संघीय संरचना समिति

डॉ. अम्बेडकरः मैं भी इस बात से सहमत हूं कि शायद कहीं ज्यादा कठोर उपाय करने होंगे और जैसा कि हम जानते हैं, स्विस कनफेडरेशन में सेना तक का इस्तेमाल किया जाता है। स्विट्जरलैंड में संघीय न्यायालय के निर्णयों को लागू करने के लिए वहां की संघीय सरकार को सेना का इस्तेमाल करने का अधिकार दिया जाता है। मैं यहां यह निर्धारित नहीं करना चाहता कि अमुक उपाय अपनाए जाने चाहिए, लेकिन जो कुछ मैं कह रहा हूं, वह ऐसा ही है। अमरीका में जो दिक्कत पैदा हुई, वह यह है कि वहां संघीय सरकार के पास कोई शक्ति नहीं थी।

अध्यक्ष : मैं मान रहा हूं, इसलिए वह कोई उत्तरदायित्व नहीं लेती।

डॉ. अम्बेडकरः जी हां। ऐसी स्थिति भारत में पैदा नहीं होनी चाहिए।

लॉर्ड लोथियनः अमरीका में क्या यह फर्क नहीं है कि वहां संघीय सरकार तब तक कार्यवाई कर सकती है, जब तक कोई मामला किसी व्यक्ति के खिलाफ होता है। लेकिन यह प्रश्न 'कनवेंशन' में उठा था और उन्होंने यह निर्णय किया कि संघीय सरकार किसी राज्य के खिलाफ कार्रवाई नहीं करेगी, क्योंकि कोई राज्य किसी दूसरे राज्य के खिलाफ युद्ध करके ही कोई कार्रवाई कर सकता है और इसलिए उन्होंने इस दायित्व को पूरा करने के लिए राज्य पर दबाव डालने का काम समाज पर छोड़ दिया। आप भी किसी सीमा तक व्यक्ति के मामले में ऐसा कर सकते हैं, लेकिन आप संघ में अपनी संवैधानिक व्यवस्था के अंग के रूप में युद्ध का रूप दिए बगैर किसी संघीय सरकार को किसी राज्य के खिलाफ कार्रवाई करने का प्रावधान नहीं कर सकते और कोई ऐसा करेगा भी नहीं। यही आपकी कठिनाई है।

डॉ. अम्बेडकरः मैं इस बारे में नहीं जानता। लेकिन जैसा कि मैंने कहा, अमरीका में भी विद्रोह को दबाने के लिए वहां के प्रेसिडेंट को सेना का इस्तेमाल करने का अधिकार मिला हुआ है।

लॉर्ड लोथियनः और यही युद्ध का कार्य बन जाता है। यह विगत दिनों में हुआ है।

डॉ. अम्बेडकरः अमरीका के संविधान में इसका प्रावधान है।

श्री जयकरः लेकिन निश्चय ही विकल्प इन्हीं दो में से होगा- गृह युद्ध या संघ के प्रति निष्ठा।

डॉ. अम्बेडकरः यही मैं भी अनुभव करता हूं। आज जो बात कहना चाह रहे हैं, मैं उसके महत्व को अस्वीकार नहीं कर रहा हूं। मैं जो बात कह रहा हूं। वह यह है कि हमारे यहां वैसी स्थिति नहीं होनी चाहिए, जैसी कि हम अमरीका में देखते हैं, हालांकि वहां संघीय कार्यक्षेत्र में से उत्पन्न होने वाले झगड़ों को निपटाने के लिए संघीय न्यायालय हैं, लेकिन संघीय सरकार के पास इन निर्णयों को प्रभावी बनाने के लिए कोई अधिकार नहीं है। मैं यह कहना चाहता हूं कि हमारी संघीय सरकार या संघीय विधान-मंडल के पास उस तरह की शक्ति होनी चाहिए जैसी कि आस्ट्रेलियाई संघीय सरकार या संघीय विधान-मंडल के पास है।

श्री जिन्नाः यहां अंतर यह है कि अमरीका में संघीय सरकार के पास सेना का प्रभार और उसका नियंत्रण है। आपका यह कहना है कि संघीय सरकार जो आप प्रस्तावित कर रहे हैं, सेना का नियंत्रण और

उसका दायित्व तुरंत अपने अधिकार में ले ले।

डॉ. अम्बेडकर: ठीक है, यदि अभी नहीं तो बाद में ही सही।

श्री जिन्ना: इस बीच में क्या होगा?

डॉ. अम्बेडकर : जैसा कि मैंने कहा, यह जुदा मामला है। सेना का इस्तेमाल करने की जरूरत नहीं पड़ेगी।

श्री जयकार: आपको सेना की सहायता लेने के लिए 'क्राउन' के पास जाना पड़ेगा।

डॉ. अम्बेडकर: जी हां।

श्री जयकर: सेना पर अंतत: अधिकार 'क्राउन' का है।

डॉ. अम्बेडकर: मैं जिस बात पर जोर दे रहा हूं, इससे वह कम नहीं होता। संघीय विधान-मंडल को अधिकार देना ही होगा। अमरीका में राज्यों द्वारा लोगों को फांसी दी जा रही है, हालांकि इसके खिलाफ वहां के सर्वोच्च न्यायालय ने त्रुटि-याचिका (रिट ऑफ एरर) जारी की है।

अध्यक्ष: मैंने इंग्लिश कामन लॉ के बारे में ऐसी टिप्पणी सुनी है कि यह देखने के लिए कि कोई पौधा बढ़ रहा है या नहीं, उसे बार-बार उखाड़ने और उसकी जड़ों को देखने से कोई लाभ नहीं। इंग्लिश कामना लॉ ऐसी कोई बात नहीं स्वीकार करेगा और यही और कानूनों के बारे में भी है। आप बड़ा रोचक कानूनी पेंच सुना रहे हैं और संक्षेप में इसका जवाब यह है कि कोई भी आदमी किसी भी चीज को बेकार कर सकता है। किसी नींव के बारे में यह पता लगाने के लिए कि वह ठीक से रखी गई या नहीं, उसे बार-बार उलटने-पलटने से कोई प्रयोजन पूरा नहीं होता। आपको लोगों की सद्भावना पर कुछ तो विश्वास करना चाहिए। वर्जीनिया के मामले में लोगों को सही रास्ते पर आने में लगभग 19 साल लग गए। शायद यह आपके मामले में भी ऐसा ही हो। शुरू में ये दिक्कत होंगी। लेकिन जब आप साथ-साथ काम करने लगेंगे, तब इनमें से बहुत-सी दिक्कतें दूर हो जाएंगी। आप अपने मकान की नींव हर तीन हफ्ते के बाद यह देखने कि लिए नहीं खोद सकते कि यह दुरूस्त है या नहीं। आपको लोगों पर कुछ विश्वास करना ही चाहिए।

मैंने इंग्लिश कॉमन लॉ के बारे में ऐसी टिप्पणी सुनी है कि यह देखने के लिए कि कोई पौधा बढ़ रहा है या नहीं, उसे बार-बार उखाड़ने और उसकी जड़ों को देखने से कोई लाभ नहीं। इंग्लिश कॉमन लॉ ऐसी कोई बात नहीं स्वीकार करेगा और यही और कानूनों के बारे में भी है। आप बड़ा रोचक कानूनी पेंच सुना रहे हैं और संक्षेप में इसका जवाब यह है कि कोई भी आदमी किसी भी चीज को बेकार कर सकता है। किसी नींव के बारे में यह पता लगाने के लिए कि वह ठीक से रखी गई या नहीं, उसे बार-बार उलटने-पलटने से कोई प्रयोजन पूरा नहीं होता। आपको लोगों की सद्भावना पर कुछ तो विश्वास करना चाहिए। वर्जीनिया के मामले में लोगों को सही रास्ते पर आने में लगभग 19 साल लग गए। शायद यह आपके मामले में भी ऐसा ही हो। शुरू में ये दिक्कत होंगी।

डॉ. अम्बेडकर: मैं तो यही कहूंगा कि हमें अपनी नींव बालू में नहीं बनानी चाहिए।

अब इस विषय के तीसरे मुद्दे पर आइए, अर्थात संघीय न्यायालय का गठन। मैं इस बारे में ज्यादा कुछ नहीं कहना चाहता, क्योंकि जो कुछ कहा जा चुका है, उससे मैं सहमत हूं। मैं एक सुझाव अवश्य देना चाहता हूं कि हमें इस मामले में आस्ट्रेलियाई मॉडल अपना लेना चाहिए। इससे हम एक संघीय अपील न्यायालय ही नहीं गठित कर सकेंगे, बल्कि सारे भारत के लिए सर्वोच्च अपीली न्यायालय भी गठित कर लेंगे, जैसा कि आस्ट्रेलिया में है। इस न्यायालय में न सिर्फ न्यायालयों की, जिसका कार्यक्षेत्र संघीय है, अपीलों की सुनवाई की जाती है, बल्कि ऐसे मामलों पर न्यायालयों की अपीलों की भी सुनवाई की जाती है।

मैं खास तौर से यह बताना चाहता हूं कि संघीय विधान-मंडल को इस बात की पूरी छूट होनी चाहिए कि वह भारतीय राज्यों के न्यायालयों को, संघीय कार्यक्षेत्र सौंप सके, जिससे कि वह इन न्यायालयों की सेवाओं का उपयोग कर सके। संघीय दायित्व सिर्फ प्रांतों में स्थित उच्च न्यायालयों को ही नहीं सौंपा जाना चाहिए, बल्कि राज्यों के कुछ चुनींदा न्यायालयों को, जो संघीय विधान-मंडल की जानकारी में कुशलतापूर्वक

कार्य कर रहे हैं। कुछ मामलों में संघीय दायित्व का निर्वाह करने के लिए चुना जाना चाहिए। मैं सोचता हूं कि इसके बहुत ही महत्वपूर्ण परिणाम होंगे। पहली बात तो यह है कि इससे राज्यों के न्यायालयों की प्रतिष्ठा बढ़ जाएगी और दूसरी बात यह है कि इससे राज्यों के न्यायालयों का संबंध भारत की संपूर्ण न्यायिक व्यवस्था से हो जाएगा और हमारा संघ एक वास्तविक संघ बन जाएगा।

श्री जयकर: सर्वोच्च न्यायालय अर्थात संघीय न्यायालय में अपील करने की व्यवस्था होनी चाहिए।

डॉ. अम्बेडकर: मैं इसी विषय पर आ रहा हूं। इस बारे में मेरा सुझाव है कि राज्यों को ऐसे मामलों में भी जिनका संबंध संघीय कार्यक्षेत्र से नहीं है, अपनी अपीलें संघीय सर्वोच्च न्यायालय को भेजने की सहमति देनी चाहिए। अगर वह ऐसा नहीं करते हैं, तब मेरा सुझाव है कि हमें वही मुक्त नीति अपना लेनी चाहिए, जो आस्ट्रेलियाई संविधान में अपनाई हुई है। आस्ट्रेलियाई संविधान में यह प्रावधान है कि संघीय न्यायालय या वहां के उच्च न्यायालयों को राज्यों से प्राप्त अपीलों को सुनने से रोका नहीं जाएगा। मैं चाहता हूं कि यह प्रावधान हमारे अपने संविधान में अपना लिया जाए। हो सकता है कि हम राज्यों के न्यायालयों को अपनी-अपनी अपीलें संघीय न्यायालय को भेजने के लिए बाध्य न करें, लेकिन अगर बाद में राज्य अपने-अपने न्यायालयों की अपीलें संघीय न्यायालय को भेजेंगे तब हमें संघीय उच्च न्यायालय को अपीलें सुनने से रोकना चाहिए। जैसा कि मैंने कहा, मैं फिर आस्ट्रेलियाई संविधान में दिए गए मॉडल को अपनाऊंगा और राज्यों को अपने-अपने यहां के न्यायालयों द्वारा संघीय न्यायालय को अपीलें भेजने के उनके अधिकार को विनियमित करने का अधिकार दूंगा। वे अपील करने का यही अधिकार नहीं देंगे - क्योंकि वे ब्रिटिश प्रांतों से जुड़े होंगे। अगर वे चाहें, तो उसे विनियमित कर सकते हैं।

इसके अलावा एक और बात मैं कहना चाहता हूं। यह संघीय सरकार के साथ उच्च न्यायालय के संबंध के बारे में है। इस समय कलकत्ता उच्च न्यायालय को छोड़कर सभी भारतीय न्यायालय वित्त और प्रशासन दोनों, मामलों में प्रांतीय हैं। कलकत्ता उच्च न्यायालय निश्चय ही वित्त के लिए प्रांतीय है, लेकिन प्रशासन के मामले में केन्द्रीय है। माननीय तेज बहादुर सप्रू ने कल यह सुझाव दिया कि भारतीय उच्च न्यायालय सभी प्रांतों में प्रशासन के मामले में केंद्रीय और वित्तीय प्रयोजन के लिए प्रांतीय होने चाहिए। जहां तक माननीय तेज बहादुर सप्रू का यह सुझाव है कि इन्हें प्रशासन के लिए केंद्रीय होना चाहिए, मैं उनसे पूरी तरह सहमत हूं। लेकिन इसके लिए मेरे कारण कुछ जुदा हैं और मैं उन्हें कहना चाहता हूं। उन्होंने कहा है कि भारतीय प्रांतों के न्यायाधीशों के मन में

मेरा अनुमान है कि ऐसी ही योजना है। कम से कम हमने अपने सम्मुख यही आदर्श रखा है कि सभी देशी राज्य इस संघ में शामिल होंगे। मैं समझता हूं कि इस बारे में कोई मतभेद नहीं है कि बहुत से ऐसे राज्य जो भारतीय संघ में आएंगे, वे वित्तीय दृष्टि से इतने समर्थ नहीं हैं कि अपने लिए सक्षम न्याय-प्रबंध की व्यवस्था कर सकें। मैं बंबई प्रेसिडेंसी का एक उदाहरण दे रहा हूं। बंबई में एक छोटा-सा राज्य है। इसका प्रशासन एक महिला के हाथों में है। इस राज्य में, जहां तक मुझे मालूम है, सिर्फ एक अधिकारी है। वह सिविल जज के रूप में कार्य करता है। वह मजिस्ट्रेट के रूप में भी काम करता है और सेशन जज के रूप में काम करता है। वह अपीलें राज्य प्रमुख के पास भेजता है और उसकी एक दीवान सहायता करता है, जहां तक मैं जानता हूं, वह एक सेवानिवृत्त राजस्व अधिकारी है। बहुत से पेचीदा मामले इस ट्रिब्यूनल के पास सुनवाई के लिए आते हैं, जिसे उस राज्य की प्रिवी कांउसिल कहा जाता है और इस तरह जो न्यायालय वहां गठित है, वही निर्णय देता है। अब मैं इसके लिए किसी को दोष नहीं देता। ध्यान देने की बात यह है कि यह राज्य इतना छोटा है कि इसके पास इतना राजस्व नहीं कि वह अपने यहां किसी सक्षम न्यायालय की स्थापना कर सके।

यह घबराहट है कि उन पर स्थानीय राजनीतिक दवाब पड़ सकता है, इसलिए वे चाहते हैं कि उन्हें स्थानीय राजनीति से उठाकर संघीय नियंत्रण में रख दिया जाए। अब मैं सोचता हूं कि किसी भी देश में जहां पर प्रतिनिधि आधारित लोकतंत्र और उत्तरदायी सरकार है, हमारे उच्च न्यायालय दलगत राजनीति या राजनीतिज्ञों के प्रभाव से बच नहीं सकते।

माननीय तेज बहादुर सप्रू: मैं सोचता था कि कानून का सिद्धांत यह है कि ब्रिटिश न्यायालय दलगत राजनीति से अलग होते हैं।

डॉ. अम्बेडकर: इस देश में कुछ न्यायिक पद ऐसे हैं, जिनके बारे में यह कहा जाता है कि इन पर राजनीतिक नियुक्तियां होती हैं। लेकिन यह एक अलग मामला है। मैं इस समिति के सम्मुख विचारार्थ यह रखना चाहता हूं कि हम संघ में लगभग 562 भारतीय राज्यों को शामिल कर रहे हैं।

श्री जिन्ना : क्या आप ऐसा कर रहे हैं?

डॉ. अम्बेडकर: मेरा अनुमान है कि ऐसी ही योजना है। कम से कम हमने अपने सम्मुख यही आदर्श रखा है कि सभी देशी राज्य इस संघ में शामिल होंगे। मैं समझता हूं कि इस बारे में कोई मतभेद नहीं है कि बहुत से ऐसे राज्य जो भारतीय संघ में आएंगे, वे वित्तीय दृष्टि से इतने समर्थ नहीं हैं कि अपने लिए सक्षम न्याय-प्रबंध की व्यवस्था कर सकें। मैं बंबई प्रेसिडेंसी का एक उदाहरण दे रहा हूं। बंबई में एक छोटा-सा राज्य है। इसका प्रशासन एक महिला के हाथों में है। इस राज्य में, जहां तक मुझे मालूम है, सिर्फ एक अधिकारी है। वह सिविल जज के रूप में कार्य करता है। वह मजिस्ट्रेट के रूप में भी काम करता है और सेशन जज के रूप में काम करता है। वह अपीलें राज्य प्रमुख के पास भेजता है और उसकी एक दीवान सहायता करता है, जहां तक मैं जानता हूं, वह एक सेवानिवृत्त राजस्व अधिकारी है। बहुत से पेचीदा मामले इस ट्रिब्यूनल के पास सुनवाई के लिए आते हैं, जिसे उस राज्य की प्रिवी कांउसिल कहा जाता है और इस तरह जो न्यायालय वहां गठित है, वही निर्णय देता है। अब मैं इसके लिए किसी को दोष नहीं देता। ध्यान देने की बात यह है कि यह राज्य इतना छोटा है कि इसके पास इतना राजस्व नहीं कि वह अपने यहां किसी सक्षम न्यायालय की स्थापना कर सके।

फिर, एक बात और विचार करने की है कि हम ब्रिटिश भारत में भी नए-नए प्रांत इतने छोटे बनाते चले जाएं कि वे भी वित्तीय दृष्टि से अपने यहां एक उच्च न्यायालय की व्यवस्था न कर सकें। ऐसा आज भी हो रहा है। असम प्रांत अपने यहां एक उच्च न्यायालय नहीं रख सकता। यह बंगाल प्रेसिडेंसी में स्थित उच्च न्यायालय की सहायता से अपना काम चलाता है। मेरा निवेदन यह है कि हम स्थिति को इस तरह सुधारें कि अगर वे उचित न्याय-प्रबंध की व्यवस्था नहीं कर सकते, तो उनको अपने यहां के लोगों के दीवानी और फौजदारी के मामलों में उन उच्च न्यायालयों की सेवा लेने की अनुमति दें, जो ब्रिटिश भारत में स्थित हैं, तो ऐसी योजना का स्वागत किया जाना चाहिए। यह एक तथ्य है कि जब तक प्रांतीय उच्च न्यायालयों पर संबंधित प्रांतीय सरकार का एकमात्र नियंत्रण रहेगा, तब तक ये राज्य जिनकी उस प्रांत के मामलों को नियंत्रित करने में कोई साझेदारी नहीं है, प्रांतीय उच्च न्यायालय की सेवाओं का उपयोग करने में कोई रूचि नहीं लेंगे। दूसरी ओर, यदि प्रांतीय उच्च न्यायालय केन्द्र के नियंत्रण में कर दिए जाएं, जहां इन राज्यों का प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रीती से प्रतिनिधित्व रहेगा, तब इन राज्यों को अपने यहां के लोगों के दीवानी और फौजदारी के मामलों में इन न्यायालयों की सेवाओं का उपयोग करने के लिए प्रयाप्त प्रेरणा मिलेगी और वे कम तटस्थ रहेंगे। इसके परिणामस्वरूप हम इन देशी राज्यों के, जो भारत की भावी सरकार के अंग होंगे, न्याय-प्रबंध में प्रांतीय उच्च न्यायालयों की क्षमता को क्षति पहुंचाए बिना यथेष्ट सुधार ला सकेंगे। इस कारण से मैं सुझाव देता हूं कि प्रांतीय उच्च न्यायालय प्रशासन के निमित्त और वित्तीय दृष्टि से भी केंद्रीय विषय बना दिए जाएं। कलकत्ता उच्च न्यायालय प्रशासन के लिए केंद्रीय क्यों है? इसकी एक वजह तो यह है कि यह सिर्फ बंगाल प्रेसिडेंसी के लिए नहीं है। यह एक ऐसा न्यायालय है, जो बंगाल प्रेसिडेंसी और असम प्रांत, दोनों के लिए एक संयुक्त न्यायालय है। यही कारण था, जिससे साइमन कमीशन ने यह सिफारिश की थी कि यह व्यवस्था आगे भी जारी रहनी चाहिए और इसे दूसरे प्रांतों में भी लागू करना चाहिए। प्रस्तुत प्रस्ताव का क्यों स्वागत किया जाना चाहिए, मेरे विचार में उसका यही कारण है।

मुझे संघीय न्यायालय विषय पर बस

फिर, एक बात और विचार करने की है कि हम ब्रिटिश भारत में भी नए-नए प्रांत इतने छोटे बनाते चले जाएं कि वे भी वित्तीय दृष्टि से अपने यहां एक उच्च न्यायालय की व्यवस्था न कर सकें। ऐसा आज भी हो रहा है। असम प्रांत अपने यहां एक उच्च न्यायालय नहीं रख सकता। यह बंगाल प्रेसिडेंसी में स्थित उच्च न्यायालय की सहायता से अपना काम चलाता है।

इतना ही कहना था।

चौवालीसवीं बैठक-
2 नवंबर 1931
तीसरी रिपोर्ट के मसौदे पर बहस

डॉ. अम्बेडकर: * मैं पैराग्राफ की आखिरी चार पंक्तियों पर आपका ध्यान आकृष्ट करता हूं। शुरू में इतना कहने के बाद बतौर सिफारिश उप-समिति की दूसरी रिपोर्ट के पैराग्राफ 34 में कहा गया है:-

हम इन हितों में से पहले चार हितों के संबंध में कोई सिफारिश नहीं करते हैं, क्योंकि इस विषय पर अल्पसंख्यक समिति द्वारा निर्णय लिया जाना है।

अध्यक्ष महोदय! इसका आशय यह नहीं है कि समिति इन हितों के प्रतिनिधित्व के बारे में तटस्थ है और मेरा ख्याल है कि दूसरी रिपोर्ट के चौतीसवें पैराग्राफ में, जो राय दी गई है, उसमें भी ऐसा ही कोई भाव व्यक्त होता है। इसका आशय यही है कि यह उप-समिति प्रतिनिधित्व की सीमा या तरीके के बारे में कोई सिफारिश नहीं कर सकती। इसलिए अगर आप इस वाक्यांश में निम्नलिखित संशोधन कर दें, तो मैं कृतज्ञ होऊंगा:-

'जहां तक उनके प्रतिनिधित्व की सीमा या विधि का संबंध है।'

श्रीमती सुब्बरायन: संभवत: आपको याद हो कि एक बैठक में मैंने विधान-मंडल में महिलाओं के प्रतिनिधित्व के लिए कुछ विशेष प्रावधान करने के बारे में विचार करने के लिए अनुरोध किया था और मैंने सुझाव दिया था कि इसे अल्पसंख्यक आयोग की रिपोर्ट के प्रकाशित होने तक स्थगित रखा जाना चाहिए। लेकिन कहीं यह विषय छूट न जाए, इसलिए मैं यह निवेदन करती हूं कि यहां इसके बारे में कुछ उल्लेख कर दिया जाना चाहिए और पैरा 28 में 9वीं पंक्ति में 'हितों' के बाद ये शब्द जोड़ दिए जाएं:

'या विधान-मंडल में महिलाओं का प्रतिनिधित्व'

अध्यक्ष: धन्यवाद, खेद है कि हमसे यह छूट गया और मैं डॉ. अम्बेडकर का भी कृतज्ञ हूं। इन संशोधनों को शामिल कर लेंगे। यह भूल से हो गया।

श्रीमती सुब्बरायन: पिछली बार, विधान-मंडलों के बारे में नामजद सदस्यों के अमूल्य विचारों की सराहना करते हुए मैंने नए संविधान में नामजदगी के प्रश्न पर सिद्धांत के तौर पर आपत्ति की थी। जब मैं यह देखती हूं कि दोनों सदनों को समान अधिकार प्राप्त होंगे तब मैं सोचती हूं कि मुझे और ज्यादा आपत्ति करनी चाहिए। मैं रिपोर्ट में कही गई इस बात से पूरी तरह सहमत हूं कि वरिष्ठ राजनेताओं की सेवाएं बहुत ही मूल्यवान होती हैं, लेकिन मैं इस बात से भी पूरी तरह विश्वस्त हूं कि नामजदगी की प्रणाली अविवेकपूर्ण और अलोकतांत्रिक है और इसलिए यह कहीं ज्यादा अच्छा होगा कि हम ऐसे लोगों को भी चुनाव पद्धति के आधार पर लें। अगर नामजदगी की प्रणाली रहती है, तब मेरे विचार में इस खंड का सारा उद्देश्य ही समाप्त हो जाएगा और मंत्रालय उच्च सदन में अपने दल को मजबूत बनाने पर ही ध्यान रखेगा। मैं इसलिए पैराग्राफ 32 में उसकी 7, 10, 19 और 22 वीं पक्तियों में 'पुरूषों' के स्थान पर 'व्यक्तियों' शब्द रखे जाने का सुझाव देती हूं।

कल्याणकारी कार्यों का संबंध अधिकतर प्रांतीय होता है, इसलिए प्रांतों को राजस्व के ऐसे संसाधन प्राप्त होने चाहिए, जिनमें निरंतर विस्तार होता रहे। यह मुख्यत: सच भी है। लेकिन ऐसा प्रावधान करते समय, मुझे ऐसा लगता है कि उन्होंने वित्तीय प्रणाली में संघ सरकार को राजस्व के पर्याप्त और विकासशील साधनों से वंचित कर दिया है।

अध्यक्ष: श्रीमती सुब्बरायन, मैं सहमत हूं। इग्लैंड में लगभग पांच वर्ष पहले हम वास्तव में यही समझते थे कि कोई महिला 'व्यक्ति' नहीं होती।

श्रीमती सुब्बरायन: शायद वे समझते थे कि वह इससे कुछ अच्छी होती हैं।

श्री जफरूल्ला खां: हमारे जनरल क्लाजेज ऐक्ट में यह कहा गया है कि जहां कहीं 'मैन (पुरूष) शब्द का प्रयोग हुआ, उसमें वूमैन (महिला) शब्द निहित है।

श्री आयंगर: मेरी मित्र श्रीमती सुब्बारायन ने नामजद सदस्यों के बारे में जो कुछ कहा, मैं उससे सहमत हूं। मैं इस बात से भी सहमत हूं कि उच्च सदन में वरिष्ठ राजनेताओं का होना अत्यंत लाभप्रद रहेगा। लेकिन यदि देश को इन वरिष्ठ राजनेताओं की सचमुच ही जरूरत हैं तब निश्चित ही ये किसी भी निर्वाचन-क्षेत्र से चुनकर आ सकते हैं। मेरा ख्याल है कि यह नामजदगी का सिद्धांत ही खराब है और हमें इसे बिल्कुल ही छोड़ देना चाहिए।

डॉ. अम्बेडकर: श्रीमती सुब्बरायन ने जो कुछ कहा उससे मैं सहमत हूं।

* * * *

अध्यक्ष*: हम यह कहेंगे "उन विशेष प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए जो महिलाओं के लिए अपेक्षित होंगे, उच्च सदन में अभ्यर्थियों के लिए आदर्श रूप ग्रहण किया जाना चाहिए"।

डॉ. अम्बेडकर: मुझे 34 वें पैराग्राफ के इस भाग को–'राज्य परिषद में सदस्यता योग्यता के लिए आदर्श' स्वीकार करने में कई आपत्तियां हैं। मुझे ऐसा लगता है कि इससे दलित वर्ग का प्रतिनिधित्व होना पूरी तरह रूक जाएगा।

अध्यक्ष: हमें ऐसा नहीं करना चाहिए।

डॉ. अम्बेडकर: मताधिकार समिति को स्वतंत्रता भी होनी चाहिए कि वह आदर्श नियम बनाते समय इस बात का ध्यान रखे।

* * * *

डॉ. अम्बेडकर*: मैं यह कहना चाहता हूं कि समिति को इस बात पर भी विचार करना चाहिए कि केंद्रीय सरकार को आपात स्थिति के मामलों में प्रत्यक्ष रूप से और अकेले ही अपने लिए वित्त व्यवस्था करने का अधिकार दिया जाए, बजाए इसके कि वह प्रांतों और राज्यों से प्राप्त होने वाले अंशदान पर निर्भर रहे।

लार्ड पील: इन सब बातों पर, निश्चय ही, हर दृष्टिकोण से विचार किया गया था और यह विभिन्न दृष्टिकोण के समन्वित करने का फल था। मेरा ख्याल है कि इस समय मैं सिर्फ इतना ही कह सकता हूं।

श्री जोशी: अध्यक्ष महोदय! मैं डॉ. अम्बेडकर के दृष्टिकोण से सहमत हूं।

डॉ. अम्बेडकर: अध्यक्ष महोदय! मैं यह भी कहना चाहता हूं कि तथ्य जांच समिति (फैक्ट फाइडिंग कमेटी) को संघीय विधान-मंडल के भार को ब्रिटिश प्रांतों और भारतीय राज्यों में आवंटित करते समय इन दोनों में औचित्य के सिद्धांत पर विचार करना चाहिए था।

अध्यक्ष : निस्संदेह इस बात पर लार्ड पील विचार करेंगे। आपसे अनुरोध है कि जब हम इस पूर्ण सम्मेलन में विचार करेंगे, तब इसका पुन: उल्लेख करें। आशा है, आप बुरा नहीं मानेंगे।

पैंतालीसवीं बैठक–
4 नवंबर 1931

अध्यक्ष** : अब यह रिपोर्ट लीजिए जिस पर मैं आपकी टिप्पणियां चाहता हूं। कृपया क्या आप पिछले पैराग्राफ संख्या 52 पर विचार प्रकट करेंगे?

डॉ. अम्बेडकर : क्या मैं पैराग्राफ संख्या 52 के संबंध में यह टिप्पणी कर सकता हूं? अध्यक्ष महोदय! आपको याद होगा कि जब हम संघीय न्यायालय के अधिकार –क्षेत्र के बारे में विचार-विमर्श कर रहे थे, मैंने संविधान का निर्वाचन करने और यह सुनिश्चित करने के लिए यह मुद्दा उठाया था कि न प्रांतीय सरकारें और न ही संघीय सरकार एक-दूसरे के कार्य-क्षेत्र में दखल करें। संघीय न्यायालय को मूल अधिकारों और अल्पसंख्यकों के अधिकारों से संबंधित मामलों की सुनवाई और उन पर निर्णय देने का अधिकार होना चाहिए। मेरा ख्याल है कि इस संबंध में श्री जयकर ने और अगर मैं सही हूं तो श्री शास्त्री ने भी मेरा समर्थन किया था। संभवत: इस संबंध में इस पैराग्राफ में कुछ टिप्पणी जोड़ी जाएगी।

अध्यक्ष: मैं डॉ. अम्बेडकर का कृतज्ञ हूं और मैं उन्हें पुन: विश्वास दिलाता हूं कि जब ये विषय संविधान में आएंगे तब ये सभी विषय संघीय न्यायालय के निर्वाचन क्षेत्र में जाएंगे।

श्री जयकर: यह 'संवैधानिक' शब्द में शामिल है।

* * * *

अध्यक्ष* : अब पैराग्राफ 62 लीजिए।

डॉ. अम्बेडकर: मेरा ख्याल है कि इस न्यायालय के दिल्ली में होने के बारे में सभी एक मत नहीं थे। मैं चाहता हूं कि इस मामले की जांच किसी समिति द्वारा की जानी चाहिए।

श्री जयकर: मैंने सुझाव दिया था कि यह किसी केंद्रीय स्थान में हो न कि दिल्ली में वह ऐसे स्थान पर हो जहां की जलवायु सारे वर्ष काम करने के मुताबिक हो और जहां पर न्यायालय सारे वर्ष काम कर सकें।

श्री जफरूल्ला खां: विभिन्न पक्षों से सभी तरह के सुझाव आए थे, लेकिन मैं नहीं जानता कि किसी दूसरी जगह को इतना ज्यादा समर्थन प्राप्त है।

अध्यक्ष: अब कृपया पैराग्राफ 63 और 64 लीजिए।

छियालीसवीं बैठक–
14 नवंबर 1931
भावी प्रक्रिया पर विचार विमर्श

डॉ. अम्बेडकर** : इस बारे में कि मेंबर आर्मी और कमांडर-इन-चीफ के बीच किस प्रकार के संबंध होने चाहिए, मैं जानना चाहता हूं कि माननीय तेज बहादुर सप्रू के क्या विचार हैं। क्या कमांडर-इन-चीफ को मंत्री या मेंबर के नियंत्रण और देखरेख के अधीन सिर्फ विभाग अध्यक्ष होना चाहिए या आप उसे कुछ अधिकार भी देना चाहेंगे, जिसमें मेंबर आर्मी को दखल करने का कोई अधिकार नहीं होगा?

माननीय तेज बहादुर सप्रू : मैं तफसील में नहीं जाना चाहता। लेकिन मैं मेंबर आर्मी की स्थिति के बारे में जो कुछ सोचता हूं, वह यह है कि वह सामान्य नीति, वित्तीय या अन्य समस्याओं से संबंधित मामले देखेगा। लेकिन उसे तकनीकी या सेना से संबंधित प्रशासनिक मामलों को देखने का कोई अधिकार नहीं होगा और अगर उसके पास ऐसे अधिकार हो भी तो वह इतना समझदार तो होगा ही कि वह इन अधिकारों का प्रयोग नहीं करेगा। मेरी इस बारे में कोई निजी जानकारी नहीं है लेकिन मैं अपने ब्रिटिश सहयोगियों से यह अपील करूंगा कि वह यह बताने की कृपा करें कि इंग्लैंड में इस संबंध में ठीक-ठीक स्थिति क्या है? वहां सेक्रेटरी ऑफ स्टेट फार वार के पास संभवत: सेना के आंतरिक अनुशासन में दखल देने का कोई अधिकार नहीं है। लेकिन वह नीति के महत्वपूर्ण प्रश्नों को देखता है। मैं आपकी सेना के इतिहास में ड्यूक ऑफ कैंब्रिज काल को नहीं भूल सकता। ■

(शेष अगले अंक में)

सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय (भारत सरकार की योजनाएं)

अनुसूचित जातियों के लिए कार्यरत स्वैच्छिक संगठन सहायता अनुदान योजना

उद्देश्य

इस योजना का मुख्य उद्देश्य लक्ष्य समूह अर्थात् अनुसूचित जातियों के शैक्षिक और सामाजिक आर्थिक दशाओं को सुधारने के लिए कौशल उन्नयन को ध्यान में रखते हुए स्वैच्छिक क्षेत्र को शामिल करना है, ताकि वे अपने-आप आय सृजक कार्यकलाप आरंभ या किसी अन्य क्षेत्र अथवा अन्य प्रकार से लाभदायक रोजगार प्राप्त करने में सक्षम हो सकें।

मुख्य विशेषताएं

- यह योजना 40 विभिन्न परियोजनाओं को कवर करती है, जिनके लिए पात्र स्वैच्छिक संगठनों को सहायता प्रदान की जाती है। ये व्यापक रूप से शैक्षिक, व्यावसायिक तथा सेवा परियोजनाओं के रूप में वर्गीकृत हैं, जिनका उद्देश्य अनुसूचित जाति लक्ष्य समूहों को उनके कौशल तथा शैक्षिक स्तरों का उन्नयन करके सुसज्जित करना है, ताकि वे या तो नियोजन, स्वयं नियोजन अथवा वेतन नियोजन के माध्यम से आय सृजक कार्यकलाप आरंभ करने में समर्थ हो सके।
- सहायता की मात्रा प्रत्येक मामले में योग्यता के आधार पर निर्धारित की जाएगी। ताकि, भारत सरकार अनुमोदित व्यय का 90 प्रतिशत पूरा कर सके, शेष व्यय संबंधित संगठन द्वारा अपने स्वयं के संसाधनों से पूरा किया जाना होता है।
- स्वैच्छिक संगठनों को अपने स्वयं का निधियों को जुटाने तथा सरकार पर अपनी निर्भरता को कम करने तथा वास्तविक अर्थों में एन.जी.ओ. बनने के लिए समर्थ होने हेतु, वित्त वर्ष 2007-08 से, मंत्रालय ने दो वर्ष के अंतराल पर गैर-सरकारी संगठनों के सहायता अनुदान पर 5 प्रतिशत अतिरिक्त कटौती लगाने का फैसला किया था ताकि बजटीय लेखे के 75 प्रतिशत तक अनुदान के स्तर को नीचे लाया जा सके।
- 5 प्रतिशत की कटौती उन गैर-सरकारी संगठनों पर लागू है जो मंत्रालय से सात वर्ष से अधिक समय से अनुदान ले रहे हैं। तथापि, ग्रामीण क्षेत्रों में अवस्थित परियोजनाओं के लिए यह कटौती लागू नहीं होती है। ग्रामीण क्षेत्र की परिभाषा में वे क्षेत्र आते हैं जो किसी ग्राम पंचायत के अंतर्गत आते हैं (अधिसूचित क्षेत्र, छावनी बोर्ड, नगर पंचायत, नगर पालिका अथवा कोई नगर निगम न हों)।

आवेदन के लिए पात्र स्वैच्छिक संगठन

सोसाइटी पंजीकरण अधिनियम, 1860 (1860 का XII) अथवा राज्य/संघ राज्य क्षेत्र के किसी संगत अधिनियम के अंतर्गत पंजीकृतः अथवा

(i) उस समय लागू किसी विधि के अंतर्गत पंजीकृत कोई सार्वजनिक न्यास; अथवा

(ii) कम्पनी अधिनियम, 1958 की धारा 25 के अंतर्गत लाइसेंस प्राप्त कोई चेरिटेबल कम्पनी।

(iii) इण्डियन रेड क्रास सोसाइटी अथवा उसकी शाखाएं और अथवा

(iv) कोई अन्य सार्वजनिक निकाय अथवा संस्था जिसका अपने स्वयं का एक विधिक दर्जा है;

(v) इस योजना के अंतर्गत अनुदान के लिए आवेदन करने के समय वह स्वैच्छिक संगठन कम से कम दो वर्षों से पंजीकृत हो। तथापि, अपवादस्वरूप मामलों में, लिखित में कारण दर्ज करते हुए सचिव, सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्री द्वारा इसमें छूट दी जा सकती है।

(vi) अनुसूचित जाति लाभार्थियों की संख्या 60 प्रतिशत से कम न हो।

(vii) कोई अन्य संगठन जो सचिव, सामाजिक न्याय और अधिकारिता द्वारा अनुमोदित किया जाए।

(viii) किसी व्यक्ति अथवा व्यक्तियों के किसी निकाय के लिए लाभ कमाने हेतु संचालित न हो।

सहायता अनुदान मांगने की क्रियाविधि

नई परियोजना

- एनजीओ संबंधित राज्य सरकार/संघ राज्य क्षेत्र प्रशासन को पूर्ण आवेदन करें।
- राज्य/संघ राज्य क्षेत्र की बहु-विषय सहायता अनुदान समिति की सिफारिश आवश्यक है।
- सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय में जांच समिति की सिफारिश आवश्यक है।
- पूर्ण दस्तावेज।

चालू परियोजनाएं

- एनजीओ संबंधित राज्य सरकार/संघ राज्य क्षेत्र प्रशासन को पूर्ण आवेदन करें।
- बहु-विषय राज्य सहायता अनुदान समिति की सिफारिश के साथ राज्य सरकार/संघ राज्य क्षेत्र की वार्षिक अनुशंसा।
- बहु-विषय अनुशंसा।
- पूर्ण दस्तावेज।

विशेष जानकारी के लिए मंत्रालय के वेबसाइट www.socialjustice.nic.in पर जाएं

प्रधानमंत्री का सफाई अभियान जाति व्यवस्था पर प्रहार

■उपेन्द्र प्रसाद

प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी द्वारा चलाया गया स्वच्छता अभियान सिर्फ सार्वजनिक स्थलों, सड़कों और घरों की सफाई का अभियान नहीं, बल्कि यह हमारे देश की जाति व्यवस्था पर एक बहुत बड़ा हमला है। इसके पहले भी स्वच्छता अभियान चलाए जाते रहे हैं। नगरपालिकाएं इसके लिए कभी-कभी विशेष अभियान चलाती हैं। खास मौके पर लोग सफाई में लग जाते हैं। उदाहरण के लिए छठ पूजा के समय में पूजा स्थल और आसपास के इलाकों की सफाई होती है। अनेक सार्वजनिक त्यौहारों पर भी सार्वजनिक सफाई की जाती है। कोई अन्य सामाजिक, राजनैतिक या धार्मिक आयोजन होते हैं, तब भी सफाई करवाई जाती है। सफाई एक निरंतर चलने वाली प्रक्रिया है। क्योंकि गन्दगी फैलाना भी एक निरंतर प्रक्रिया है। इसलिए गन्दगी फैलती रहती है और सफाई भी होती रहती है। पर यदि गन्दगी फैलने के मुकाबले सफाई कम हो तो माहौल गन्दा ही रहता है।

हमारे देश की यही समस्या है। यह हमारे देश की ही नहीं, बल्कि लगभग सभी विकासशील देशों की समस्या है। गन्दगी का सम्बन्ध गरीबी से भी है। लेकिन भारत में गन्दगी का एक सामाजिक आयाम भी है और वह आयाम जाति व्यवस्था से जुड़ा हुआ है। जाति व्यवस्था के तहत सार्वजनिक स्थलों की सफाई का जिम्मा एक जाति विशेष को दे दिया गया था। यह जाति अलग-अलग नामों से भारत के अलग-अलग क्षेत्रों में जानी जाती रही है। और जिस जाति का सार्वजनिक सफाई का जिम्मा दिया गया है, इसको समाज में सबसे निचले स्तर पर रख दिया गया। उसे अस्पृश्यता का भी शिकार बना दिया गया।

अब अस्पृश्यता को असंवैधानिक और गैर-कानूनी घोषित कर दिया गया है, लेकिन जाति व्यवस्था के तहत समाज की मुख्यधारा के जो संस्कार बने हैं, वे जल्द समाप्त होने वाले नहीं है। भारत में गन्दगी इस संस्कार का परिणाम भी है। इसके कारण लोग तो अपने घरों को साफ रखते हैं, लेकिन घर के बाहर गन्दगी फैला देते हैं। बाहर की सफाई रखना वे अपनी जिम्मेदारी नहीं मानते। वहां की गन्दगी हटाना भी कई लोगों को नागवार लगता है, क्योंकि उसे लगता है कि कहीं वह कोई ऐसा काम तो नहीं कर रहा है, जो उसका नहीं, बल्कि किसी और जाति के लोगों के लिए तय किया हुआ है।

जाति मूल रूप से एक सामंती व्यवस्था है। समाज में एक से ज्यादा सामाजिक समूह तो हमेशा रहे हैं, लेकिन उनमें ऊंच नीच की भावना सामंतकाल की उपज है। भारत में जाति व्यवस्था एक सामंती व्यवस्था ही है, जिसके तहत श्रम की निर्बाध उपलब्धता का प्रबन्ध कर लिया गया है। यह सामंतकालीन गुलामी की व्यवस्था है। सामंती मानसिकता के लोग अपने घर के बाहर का क्या, अपने घर के अन्दर की सफाई भी नहीं करते, क्योंकि सफाई करना या न करना सीधे सत्ता से जुड़ा हुआ है। जो सत्ता की कुर्सी पर बैठा हुआ है, वह सफाई कैसे कर सकता है, क्योंकि सफाई करना तो गुलामों का काम है। और कौन यह दिखाना चाहेगा कि वह गुलाम है।

अब सामंतवाद समाप्त हो गया। हमने

लोकतंत्र अपना लिया है। छुआछूत को भी कानूनी तौर पर समाप्त कर दिया गया है। समाप्त करने का मतलब है कि आजादी के पहले इसे कानूनी संरक्षण भी मिला हुआ था। कानून का संरक्षण समाप्त होने के बाद भी यह तो दिमाग में बैठ ही गया है कि बाहर में सफाई करते दिखने से अपना छोटापन दिखाई पड़ेगा, इसलिए कोई क्यों बाहर सफाई करेगा।

प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने झाड़ू उठाकर इसी सामंतवादी संस्कार पर प्रहार किया है। झाड़ू से उन्होंने तो दिल्ली के एक इलाके मे कुछ वर्ग गज की जमीन ही साफ की, लेकिन उन्होंने झाड़ू उठाकर देश भर के सामंती लोगों की सामंती संस्कार पर हमला बोल दिया है। प्रधानमंत्री ने खुद ही झाड़ू नहीं उठाए, बल्कि उनकी सरकार के अन्य मंत्रियों और पार्टी के अन्य सांसदों ने भी झाड़ू उठाए, उन्होंने समाज के अन्य तबके के लोगों को भी प्रेरित किया और कुछ लोगों को तो सफाई करने के लिए नामांकित भी कर दिया और इस तरह एक राष्ट्रव्यापी सफाई अभियान शुरू हो गया।

हमारे योग शास्त्रों में शौच यानी सफाई को योग साधना का एक अनिवार्य सोपान माना गया है। पंतजलि योग सूत्र हो या हठयोग प्रदीपिका शौच को अष्टांग योग के दूसरे अंग नियम में रखा गया है। अपनी सफाई, अपने घर की सफाई और अपने आसपास के माहौल की सफाई को सुनिश्चत करना योगी के लिए आवश्यक माना जाता है। लेकिन हमारे देश में सफाई के प्रति लापरवाही का जो मंजर देखने को मिलता है, वह हमारे योगशास्त्र की सीख का मखौल उड़ाते दिखता है।

प्रधानमंत्री द्वारा सफाई में खुद झाड़ू उठा लेना अपने आपमें एक बड़ी घटना है। इससे देश के सफाई कर्मियों का ही सम्मान नहीं बढ़ता है। सामंतवादी जाति व्यवस्था के तहत न केवल श्रम और श्रमिकों का शोषण होता है, बल्कि उन्हें जलालत का भी सामना करना पड़ता है। यही कारण है कि हमारे देश की श्रम लांक्षित हैं और इसके कारण कार्य संस्कृति का देश में अभाव है।

आजादी के पहले महात्मा गांधी ने इस हकीकत को समझा था। यही कारण है कि उन्होंने खुद अपने हाथों में झाड़ू उठा लिया था। गांधी जी तो 7 महीने तक सफाई कर्मियों के मुहल्ले में रहे भी थे। गांधी जी ने आजादी के पहले झाड़ू उठाकर जो किया, वही प्रधानमंत्री आज कर रहे हैं। उस समय गांधी जी का झाड़ू उठाना सफाई करने से ज्यादा सफाई कर्मियों की दशा की ओर लोगों का ध्यान आकर्षित करना था। उसमें वे बहुत हद तक सफल भी हुए। सफाई कर्मियों की जाति व्यवस्था की जलालत से निकालने की एक मुहिम देश में शुरू हुई। समस्या तो समाप्त नहीं हुई, लेकिन उस समस्या को समस्या के रूप में जरूर देखा जाने लगा।

प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने झाड़ू उठाकर इसी सामंतवादी संस्कार पर प्रहार किया है। झाड़ू से उन्होंने तो दिल्ली के एक इलाके में कुछ वर्ग गज की जमीन ही साफ की, लेकिन उन्होंने झाड़ू उठाकर देश भर के सामंती लोगों की सामंती संस्कार पर हमला बोल दिया है। प्रधानमंत्री ने खुद ही झाड़ू नहीं उठाए, बल्कि उनकी सरकार के अन्य मंत्रियों और पार्टी के अन्य सांसदों ने भी झाड़ू उठाए। उन्होंने समाज के अन्य तबके के लोगों को भी प्रेरित किया।

प्रधानमंत्री द्वारा शुरू किया गया सफाई अभियान सिर्फ प्रतीकात्मक नहीं है, बल्कि इसके साथ-साथ सफाई का उद्देश्य भी सामने है। 2019 के 2 अक्टूबर को गांधी जी की 150वीं जयन्ती मनाई जाएगी। उस समय तक देश को पूरी तरह साफ करने का लक्ष्य है और देश के सभी घरों में शौचालय सुनिश्चित करने का भी लक्ष्य है।

जाहिर है, सफाई दोनों ओर होनी है। सड़कों व अन्य सार्वजनिक स्थलों की सफाई होनी है और यदि सभी लोग अपने को सफाई कर्मी भी समझने लगें, तो फिर वे गन्दगी फैलाने से भी बाज आने लगेंगे। क्योंकि यदि व्यक्ति को पता चल जाए कि जो गन्दगी वह फैला रहा है, उसकी सफाई भी उसे ही करनी है, तो गन्दगी फैलाने में वह जरूर झिझकेगा।

यह तो हुई बाहर की गन्दगी। अपने अन्दर की जाति व्यवस्था जनित गन्दगी की भी व्यक्ति सफाई कर रहा होगा। इससे जाति व्यवस्था समाप्त तो नहीं होगी, लेकिन वह जिस सामंतवादी संस्कारों के आधार पर खड़ी है, वह आधार जरूर कमजोर होगा। बाबसाहेब डॉ. भीमराव अम्बेडकर जाति व्यवस्था का पूरी तरह सफाया चाहते थे। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी का यह सफाई अभियान, जिसके तहत सत्ता के ऊंचे पदों पर बैठे लोग भी इस अभियान में शामिल हैं, सामंतवादी संस्कार पर झाड़ू फेरने का काम कर रहा है, और फिर सामंतवादी संस्कारों पर आधारित जातिवादी व्यवस्था की भी इससे सफाई होनी सुनिश्चित है।■

हम खुद लिखेंगी अपना इतिहास

■अनिता भारती

आईए हम कल्पना करें भारत की आज़ादी के आन्दोलन की और हम उसमें गांधी का नाम भूल जाएं। चलिए हम दूसरी कल्पना करें। दक्षिण अफ्रीका में ''अश्वेत लोगों के मुक्ति संघर्ष की'' और उसमें हम नेल्सन मंडेला का नाम छोड़ दे। शायद आपको मेरी बात सुनकर गुस्सा आ सकता है। शायद आप यह भी कह सकते हैं कि ये क्या बेवकूफी भरी बात है? जब हम इन शोषित-पीड़ित और दलितों के आन्दोलन और इतिहास की कल्पना उनके नेताओं के बिना नहीं कर सकते, तो हम भारतीय महिला आन्दोलन के बिना कैसे कर सकते हैं। यह भारतीय महिला मुक्ति आन्दोलन की विडम्बना ही है कि भारतीय महिला आन्दोलन पर जो पुस्तकें लिखी जा रही हैं। उन लेखिकाओं द्वारा दलित, आदिवासी पिछड़े व अल्पसंख्यक वर्ग के आन्दोलन व उनके नेताओं के प्रति गहरी उपेक्षा बरती जा रही है। कुछ पुस्तकों में तो उनके नाम, उनके कार्यों तक का जिक्र नहीं है। हम इस लेख में भारतीय महिला आन्दोलन में दलित स्त्रियों के मुद्दों, सवालों और समस्याओं के प्रति बरती जा रही उपेक्षा की चर्चा करेंगे।

भारतीय महिला इतिहास आन्दोलन के लेखन में अनेक समस्याएं हैं। आज जिस वर्ग, जाति और समाज की लेखिकाएं लेखन करती हैं। उनके लेखन में उनकी वर्ग जातिगत व समाजगत प्रवृत्तियां व रूचियां झलकती हैं। ये लेखिकाएं समाज में प्रचलित व प्रसिद्ध व्यक्तियों, धाराओं तथा वादों में बंधी हैं। अतः इनका लेखन भी उन्हीं धाराओं तथा वादों में बंधे हैं। इसलिए इनका लेखन भी उन्हीं धाराओं वादों और व्यक्तिओं से प्रतिबद्धता दर्शाता है। एक ही तरह की स्रोत सामग्री इस्तेमाल करने से समाज के कई अनछुए, अनजान पहलू, व्यक्ति व आन्दोलन पर इनका ध्यान नहीं गया। कारण कुछ भी हो; परन्तु यह बात नकारी नहीं जा सकती कि सम्पूर्ण भारतीय महिला लेखन में दलित और अति दलित महिलाओं की भागीदारी या उपस्थिति कहीं दिखती ही नहीं है। हालांकि उनके उद्धरण, उनके नाम, उनके आन्दोलन दलित अल्पसंख्यकों द्वारा लिपिबद्ध किये जा चुके हैं और किये भी जा रहे हैं। आज जिस तरह से पुरुषों द्वारा रचित इतिहास लेखन में महिलाओं के आन्दोलन, उनके अनुभव, उनकी समस्याएं उनके मुद्दों को नज़र अंदाज कर दिया गया है। उसी तर्ज पर महिला लेखन में भी दलित आदिवासी, पिछड़ी, अल्पसंख्यक महिलाओं के आन्दोलन, समस्याओं, मुद्दों विचार धाराओं और सवालों को उपेक्षित किया जा रहा है।

कुछ समय पहले हिन्दी में अनुवाद होकर आई राधा कुमार की पुस्तक ''स्त्री संघर्ष का इतिहास 1800-1990'' पढ़ने को मिली। हमारी दलित लेखिकाओं और दलित महिला आन्दोलनों में दलित स्त्रियों के आन्दोलन के साथ न्याय नहीं किया है। मैं स्वयं दलित स्त्रियों के आन्दोलन से कुछ वर्षों से जुड़ी रही हूं। इसी वजह से मैंने इस पुस्तक को ध्यानपूर्वक पढ़ना शुरू किया। मेरे आश्चर्य और दुःख की सीमा न रही, जब मैंने राधा कुमार जी की पुस्तक में दलित महिला आन्दोलन की रीढ़ ही नहीं, अपितु सम्पूर्ण भारतीय महिला आन्दोलन की जनक सावित्री बाई फुले का नाम पूरी तरह से उपेक्षित पाया।

क्या कारण है कि नारीवादी इतिहासकार सावित्री बाई फुले के योगदान को भारतीय महिला आन्दोलन में शामिल न करते हुए दलित महिलाओं के आन्दोलन व योगदान के सबसे महत्त्वपूर्ण आधार स्तम्भ को स्वीकार करने से नकारती हैं। सावित्री बाई फुले दलित महिला आन्दोलन की रीढ़ ही

नहीं; अपितु सम्पूर्ण भारतीय महिला आन्दोलन की भी आदर्श हैं। सावित्रीबाई ने उस समय घर से बाहर निकल कर दलित/गैर दलित बालिकाओं को पढ़ाना शुरू किया, जब औरत का घर से बाहर निकलना अपराध माना जाता था। वह घर से बाहर लड़कियों को पढ़ाने निकलती थीं, तो उन पर गोबर-पत्थर फेंके जाते थे। उन्हें रास्ते में रोक कर उच्च जाति के गुण्डों द्वारा भद्दी-भद्दी गाली दी जाती थी तथा उन्हें जान से मारने की लगातार धमकियां दी जाती थीं। ऐसी ही विपरीत और कठोर परिस्थितियों में सावित्रीबाई फुले ने समाज सेवा का प्रण लिया। वो बिना रुके, बिना थके 'स्त्री मुक्ति'' के पथ पर आगे बढ़ती रहीं। सावित्रीबाई फुले भारत में स्त्री-शिक्षा की जननी के साथ-साथ सक्रिय सामाजिक कार्यकर्ता, समाज सुधारक तथा दलित/गैर दलित स्त्रियों की मुक्ति के संघर्ष की प्रतीक, प्रतिनिधि और अमिट योद्धा हैं।

सावित्रीबाई फुले ने लड़कियों के लिए 1848 में बुधवार पेठ (पूना) में पहला स्कूल खोलकर भारतीय स्त्रियों के जीवन में शिक्षा द्वारा आमूल-चूल परिवर्तन लाने का प्रयास किया तथा स्त्री शिक्षा के द्वार खोल दिये। यह कदम एक दलित स्त्री द्वारा दलित व गैर दलित स्त्रियों के लिए शिक्षा के क्षेत्र में उठाया गया अभूतपूर्व कदम था। सावित्रीबाई फूले ने 1849 में पूना में ही उस्मान शेख के यहां मुस्लिम स्त्री-बच्चों के लिए प्रौढ़ शिक्षा केन्द्र खोला। 1849 में ही पूना, सतारा व अहमद नगर जिले में पाठशाला खोली। स्त्रियों की दशा सुधारने के लिए 1852 में सावित्रीबाई फूले ने ''महिला मंडल'' का गठन किया। इस महिला मंडल ने बाल विवाह, विधवा होने के कारण स्त्रियों पर किए जा रहे जुल्मों के खिलाफ स्त्रियों को तथा अन्य समाज को मोर्चाबन्द कर सामाजिक बदलाव के लिए संघर्ष किया। हिन्दू स्त्री के विधवा होने पर उसका सिर मूंड दिया जाता था। विधवाओं के सिर मुंडने और कुरीतियों के खिलाफ लड़ने के लिए सावित्री बाई फूले ने नाइयों से विधवाओं के ''बाल न काटने'' का अनुरोध करते हुए आन्दोलन चलाया जिसमें काफी संख्या में नाइयों ने भाग लिया तथा विधवा स्त्रियों के बाल न काटने की प्रतिज्ञा ली। भारत क्या पूरे विश्व में ऐसा सशक्त आन्दोलन नहीं मिलता जिसमें औरतों के ऊपर होने वाले शारीरिक और मानसिक अत्याचार के खिलाफ स्त्रियों के साथ पुरुष जाति प्रत्यक्ष रूप से जुड़ी हो। नाइयों के कई संगठन सावित्री बाई फूले द्वारा गठित महिला मण्डल के साथ जुड़े। सावित्री बाई फुले और ''महिला मंडल'' के साथियों ने ऐसे ही अनेक आन्दोलन वर्षो तक चलाये व उनमें अभूतपूर्व सफलता प्राप्त की। भारतीय समाज में स्त्री के विधवा होने पर उसके परिवार के पुरुष जैसे देवर, जेठ, ससुर व अन्य संबंधियों द्वारा उसका दैहिक शोषण किया जाता था, जिसके कारण वह कई बार मां बन जाती थी। बदनामी से बचने के लिए विधवा या तो आत्महत्या कर लेती थी, या फिर अपने अवैद्य बच्चे को मार डालती थी। अपने अवैध बच्चे के कारण वह खुद आत्महत्या न करें तथा अपने अजन्मे बच्चे को भी न मारे, इस उद्देश्य से सावित्रिबाई फुले ने भारत का पहला ''बाल हत्या प्रतिबंधक गृह'' खोला तथा निराश्रित असहाय महिलाओं के लिए अनाथाश्रम खोला। स्वयं सावित्रीबाई फूले ने आदर्श सामाजिक कार्यकर्ता का जीवन अपनाते हुए एक विधवा स्त्री के बच्चे को गोद लिया तथा उसे पढ़ा-लिखा कर योग्य डॉक्टर भी बनाया। ऐसे क्रांतिकारी कार्य करने वाली तथा समाज की धारा के विपरीत जाकर काम करने वाली सावित्रीबाई फुले का नाम इतिहास से गायब करने में सरासर षड्यंत्र की बू नजर आती है।

सावित्रीबाई फुले जीवन पर्यन्त जाति व वर्ग विहिन समाज की स्थापना के लिए प्रयासरत रहीं। सावित्री बाई फुले ने लगभग 48 वर्षो तक दलित, शोषित, पीड़ित स्त्रियों को इज्जत से रहने के लिए प्रेरित किया। उनमें शिक्षा का दीप जलाया। अपने जैसे अनेक कार्यकर्ता तैयार किये जिनमें तारा बाई शिन्दे, सगुणावाई, फातिमा शेख, सावित्री बाई रोडे, मुक्ता आदि जिनका नाम आज भारतीय महिला आन्दोलन में अमर है। अपना पूरा जीवन अर्पण करने वाली सावित्री बाई फूले के योगदान को नकारना क्या भारतीय नारी मुक्ति आन्दोलन का अपमान नहीं है?

राधा कुमार ने ऐसी शख्शियत को नारी इतिहास के पन्नों में जगह न देकर सावित्रीबाई फुले के साथ-साथ दलित महिला आन्दोलन का भी घोर अपमान किया है। जब हम भारतीय स्त्री आन्दोलन या संघर्ष की बात करते हैं तो उसमें सभी जाति, वर्ग, धर्म, भाषा की स्त्रियों के योगदान की चर्चा होनी चाहिए। उसमें उन्हें उपयुक्त जगह मिलनी चाहिए। लेकिन अक्सर ऐसा होता नहीं है। दलित महिलाओं ने हमेशा संघर्ष किया है, विरोध प्रकट किया है और करती रहेंगी। चाहे उसने ये विद्रोह या संघर्ष स्वतंत्र रूप से किया हो या किसी के नेतृत्व में। ये संघर्षशील दलित नायिकाएं जिनमें वीरांगना झलकारी बाई, रानी शिरोमणि, रानी दुर्गावती हो या उदादेवी पासी, झानों और फूलों या सावित्री बाई फूले ये सब महिला आन्दोलन में संघर्ष, त्याग और बलिदान की प्रतीक हैं। डॉ. अम्बेडकर के नेतृत्व में चले दलित महिला आन्दोलन में भी अनेक अनाम, मूक, मुखर संघर्षशील दलित औरतें शामिल हुईं जिन्होंने अपनी अस्मिता, अपनी पहचान या फिर अपनी स्वतंत्रता बनाए व बचाए रखने के लिए जुझारू होकर जातीय दंभ से पूर्ण ब्राह्मणवादी पुरुष सत्तात्मक समाज को कड़ी टक्कर दी हैं।

दलित महिलाओं की प्रतिभा, उनकी क्षमता, उनके योगदान की उपेक्षा हमेशा से ही सवर्ण मानसिकता से ग्रसित समाज में होती आई है। परन्तु नारीवादी आन्दोलन से जुड़ी लेखिकाएं व कार्यकर्ता भी ऐसा

पक्षपात पूर्ण इतिहास लेखन करेंगी तो दलित महिला आन्दोलन को सोचना पड़ेगा कि आज वे स्त्रीवादी आन्दोलन में जुड़ें अथवा अलग रहें। समाज में हमेशा कुछ वर्ग जातियां ऐसी रहती हैं जो मुख्यधारा की न होकर भी उसका नेतृत्व करती हैं। असल सच तो यह कि दलित, आदिवासी पिछड़ी, शोषित, दमित जातियां ही मुख्यधारा में होती हैं। अगर आज ''ऐलिट'' तथा उच्च जाति जो अपने मन में मुख्यधारा होने का भ्रम पाले हुये है, अगर वे इस भ्रम को नहीं तोड़ते तो आज मजदूरों, किसानों, दलितों, शोषितों जोकि वास्तविक मुख्यधारा हैं, वो मुख्यधारा आज नहीं तो कल ऐसे लोगों को ठोकर की नोक पर उड़ा देगी। इस भ्रमित धारा को दलित आदिवासियों के साथ उनकी शर्त पर ही जुड़ना पड़ेगा।

आज जिस तरह महिला आन्दोलन व महिला लेखन में दलित महिलाओं के मुद्दों व उनकी समस्याओं को उपेक्षित कर उच्च वर्गीय महिलाओं के 'स्त्री देह' छदम मुद्दों को महत्व दिया जा रहा है वह अपने आप में महिला मुक्ति के औचित्य पर प्रश्नचिन्ह हैं। सावित्री बाई फूले का नाम इतिहास से गायब है या गायब कर दिया गया। कारण जो भी हो पर उसकी पड़ताल होनी आवश्यक है। महिला आन्दोलन इतिहास लेखन में सवर्ण कुमारी देवी से लेकर सरला देवी घोषाल, मैडम भीकाजी रूस्तमकामना, ऐनी बेसेंट, कमला देवी चट्टोपाध्याय, सरोजिनी नायडू, अरुणा आसफ अली, आदि अनेक उच्च वर्गीय सम्भ्रांत सामाजिक कार्यकर्ताओं की पूरी कहानी व उनके कार्यो का ब्यौरा होता है, पर दलित महिलाओं के नाम व योगदान पर गहरी चुप्पी साध ली जाती है। सावित्री बाई फूले से लेकर झलकारी बाई, फूलों और झानों, फातिमा बे, उदा देवी पासी जैसी प्रसिद्ध दलित स्त्रियों तक के नाम को भुला दिया जाता है।

राधा कुमार अपनी इतिहास पुस्तक में पंडिता रमाबाई और ज्योतिबा फुले का भी उदाहरण दो-तीन जगह देती है पर तब भी वे सावित्रीबाई फुले के योगदान को याद नहीं करती। आखिर इस घोर उपेक्षा का कारण क्या है? क्या सावित्री बाई का नाम इतिहास से इसलिए हटा दिया गया कि वो शूद्र जाति की थीं और दलित/शूद्र स्त्रियों की उन्नति के लिए कार्य कर रही थीं। जिनका उच्च वर्ग की सभ्रांत लेखिकाओं और नारीवादियों की दृष्टि में कोई मूल्य नहीं है। हमारे कुछ नारीवादी महिला नेता या लेखिकाएं दलित महिलाओं के प्रति अन्य सवर्ण महिलाओं द्वारा किये गये भेदभाव उत्पीड़न के प्रति अन्य सवर्ण महिलाओं द्वारा किये गये भेदभाव उत्पीड़न व उनके द्वारा बरती जा रही उपेक्षा पर शायद इसलिए चुप रह जाती हैं कि कही महिला आन्दोलन दो हिस्सों में न बंट जाये? वे दलित महिलाओं द्वारा लड़े गये अस्मिता संघर्ष को अलग से जगह देने को तैयार नहीं हैं या फिर दलित महिलाओं के नेतृत्व में आने से उनका नेतृत्व खतरे में पड़ जाएगा। क्या यही वे कारण हैं या अन्य कोई कारण हैं कि वे सावित्रीबाई फुले के योगदान को महत्व नहीं देती। अन्य कारणों में एक कारण यह भी हो सकता है कि उनके पति ने उन्हें पढ़ाया और समाज के लिए शिक्षित किया। अगर लेखिका ऐसा मानती हैं तो यह तो और नाइंसाफी की बात है। अक्सर हमारा समाज महिलाओं की योग्यता, क्षमता को पुरुषवादी चश्मे से देखता है, अगर सावित्री बाई फुले ज्योतिबा फूले की मदद से पढ़ पाई तो क्या उनका कोई स्वतंत्र अस्तित्व नहीं था? क्या किसी को, जब तक की उसमें खुद लगन, जज्बा व जागृति न हो तब तक उसे किसी भी कार्य करने का बाध्य किया जा सकता? अगर सावित्रीबाई फूले अपने पति की मदद से पढ़ पाईं और उनके मदद से सामाजिक क्षेत्र में जुड़ी तो इसी तर्ज पर हम यह भी कह सकते हैं कि भारत की आजादी के आन्दोलन में जो भी सभ्रांत व उच्च जाति की शिक्षित वर्ग की महिलायें जुड़ी उनमें से अधिकांश अपने पतियों, भाईयों व पिताओं के प्रयास से आयी थीं। फिर भी ऐसी महिलाओं का नाम इतिहास के स्वर्णिम अक्षरों में लिखा जाता है, और सावित्रीबाई फूले का नाम नगण्य हो जाता है। यह एक गंभीर बात है कि शूद्र जाति की सावित्रीबाई फूले सामाजिक कार्य करते हुये इस भेदभाव संकीर्णता से पूर्ण समाज में चौतरफा वार सह रही थीं फिर भी अपना कार्य लगन और धैर्य से कर रही थीं और बिना डरे लगातार कर रही थीं। ऐसी सशक्त क्रांतिकारी, स्त्री शक्ति की प्रतीक महिला के योगदान को अनदेखा करना इतिहासकारों व आन्दोलनकारियों की नीयत पर शक पैदा

> **आज जिस तरह महिला आन्दोलन व महिला लेखन में दलित महिलाओं के मुद्दों व उनकी समस्याओं को उपेक्षित कर उच्च वर्गीय महिलाओं के 'स्त्री देह' छदम मुद्दों को महत्त्व दिया जा रहा है वह अपने आप में महिला मुक्ति के औचित्य पर प्रश्नचिन्ह हैं। सावित्री बाई फुले का नाम इतिहास से गायब है या गायब कर दिया गया, कारण जो भी हो पर उसकी पड़ताल होनी आवश्यक है।**

करता है। जब दलित महिला आन्दोलन का इतिहास लिखा जायेगा तब ऐसे भेदभाव पूर्ण लेखन व उनकी भेदभाव लेखनी को कदापि बख्शा नहीं जायेगा।

सावित्रीबाई फुले की तरह ही भारतीय महिला आन्दोलन के दूसरे आधार स्तम्भ हैं डॉ. भीमराव अम्बेडकर! जिन्हें भारतीय स्त्रियों के मुक्तिदाता के रूप में माना जाता है। राधा कुमार की पुस्तक स्त्री संघर्ष का इतिहास तथा दीप्ति प्रिया मेहरोत्रा द्वारा लिखित पुस्तक भारतीय महिला आन्दोलन 'कल आज और कल' में डॉ. अम्बेडकर और उनके नेतृत्व में चला दलित महिला आन्दोलन के विषय में एक भी शब्द नहीं है। ''हिन्दू कोड बिल'' जिसका मुख्य आधार ही भारतीय नारी को कानूनी न्याय दिलाते हुये उन्हें उनके कानूनी अधिकार दिलाना था। उसका भी वर्णन राधा कुमार ने अपनी पुस्तक में मात्र चार-पांच पक्तियों में किया है। इस पुस्तक की विडम्बना यह है कि लेखिका ने केवल एक तरह के आन्दोलन का ही वर्णन किया है और एक खास विचारधारा की स्रोत सामग्री का इस्तेमाल किया है। अगर वो समाज की मुख्यधारा के संघर्ष को शामिल करती तो यह पुस्तक अत्यन्त उपयोगी हो सकती थी।

डॉ. अम्बेडकर जो कि स्त्रियों की स्वतंत्रता के बहुत बड़े हिमायती थे जिनके नेतृत्व में असंख्य दलित औरतें अन्याय के खिलाफ लड़ने सड़कों पर उतर आई थी। महाड़ के सार्वजनिक चावदार तालाब के पानी की लड़ाई में हजारों की संख्या में दलित महिलाएं शामिल हुई। 25 दिसम्बर को अम्बेडकर द्वारा ''मनुस्मृति दहन'' भारतीय महिला इतिहास की तारीख में भी अपूर्व व अनोखा दिन है। इससे पहले किसी ने भी महिलाओं के हक में धार्मिक कानूनों की सीधी-सीधी धज्जियां उड़ाते हुए मनुस्मृति को नष्ट करने का प्रयास तो क्या कभी सपने में भी नहीं सोचा था। इस घटना ने भारतीय स्त्रियों के हक में क्रांतिकारी भूमिका अपनाई। इस मनुस्मृति दहन तथा चावदार तालाब आन्दोलन में 2500 दलित महिलाओं ने भाग लिया। डॉ. अम्बेडकर के साथ दलित महिला आन्दोलन में वेणुबाई भटकर और रंगबाई शुभरकर ने कई वर्षों तक काम किया। प्रत्येक जाति व वर्ग को मन्दिर प्रवेश का अधिकार है। दलितों को भी मन्दिर प्रवेश का अधिकार चाहिए, इस विषय पर पार्वती मन्दिर व कालाराम मन्दिर पर दलित स्त्रियों के इस अस्मितावादी आन्दोलन में भी हजारों दलित स्त्रियां जुड़ी। इन महिलाओं में सीताबाई, गीताबाई, रमाबाई, नानबाई कांवलों ने सक्रिय भूमिका निभाई। इस पूरे दलित महिला आन्दोलन को या फिर अम्बेडकर कालीन इतिहास 1927 से 30 तक (अभी हम केवल 3 वर्ष की बात कर रहे हैं जबकि अम्बेडकर कालीन दलित महिला इतिहास 1924 से लेकर 56 तक है) आंकड़े जुटाने का तात्पर्य यही है कि यह सब आंकड़े आसानी से उपलब्ध हैं और अब स्वयं दलित सामाजिक कार्यकर्ता जगह-जगह घूमकर अपने इतिहास को खोजकर, प्रकाशित करवा रहे हैं।

सबसे महत्वपूर्ण बात तो यह है कि आज तक दलित महिलाएं जिन मुश्किलों से रात-दिन जूझती हैं। पानी व आवास, शिक्षा व गरीबी, सामाजिक व जातीय हिंसा आदि समस्याएं तथाकथित नारीवादी आन्दोलन का हिस्सा भी नहीं है। भारतीय नारीवादी आन्दोलन ने हमेशा मध्यम वर्गीय व उच्चवर्गीय, उच्च जाति की औरतों के मुद्दों को ही प्राथमिकता दी हैं; क्योंकि आन्दोलन का नेतृत्व हमेशा इन्हीं महिलाओं के हाथ में रहा है।

दीप्ति प्रिया महरौत्रा अपनी पुस्तक 'भारतीय महिला आन्दोलन' में जहां पर्यावरण से मुद्दों तथा उनके नेता सुंदर लाल बहुगुणा से लेकर नर्मदा बचाओ जैसे जन आन्दोलन तक को अपने नारीवादी आन्दोलन में जोड़ लेती है, वहीं दलित महिलाओं द्वारा पानी और मन्दिर प्रवेश के लिए दो दशक तक चले प्रतीकात्मक विद्रोही आन्दोलन की इन पुस्तकों में गहरी कमी या सरासर उपेक्षा मन को व्यथित कर देती है। इन पुस्तकों में दलितों के ऐसे सक्रिय और जुझारू आन्दोलनों का जिक्र तक नहीं किया गया है। पानी जो कि जीवन और सम्मान का आधार है। मन्दिर जिसमें प्रवेश करने का हरेक को बराबर अधिकार है। दलित महिलाओं द्वारा वर्षो तक चलाये गये पानी और मंदिर प्रवेश का अधिकार इन संभ्रात परिवारों की उच्च शिक्षित, विदुषी महिलाओं द्वारा नारीवादी आन्दोलन व इतिहास में शामिल न करने का एक ही अर्थ निकलता है कि उन्हें दलित महिलाओं के मुद्दों की समझ नहीं है तथा वे स्वयं उच्च जाति की हैं। इसलिये उन्हें अधिकार जन्मजात ही मिल गये। यही कारण हैं कि दलित महिलाओं द्वारा लड़ी गयी अपने सम्मान और अधिकार की लड़ाई इन इतिहास लेखिकाओं की दृष्टि में शून्य है।

चावदार तालाब जो कि सर्वसाधारण के लिए खोल दिया गया था। उसके बावजूद उसमें कुत्ते-बिल्ली से लेकर पशु-पक्षी तक पानी पी सकते थे पर दलित नहीं। अर्थात् दलितों को पशुओं से भी कम अधिकार थे और दलित समाज में दलित महिलाओं को और कम। वे निरीह, गरीब, दलित, शोषित औरतें दिन भर पानी के लिए इधर-उधर भटकती, ऊंची जात की कृपा पर निर्भर रहतीं। गिड़गिड़ाती, रोती पर पानी की एक बूंद ना पाती। आखिर में थककर जब उन्होंने इस अन्याय के खिलाफ विद्रोह किया तो, बदले में लाठी, डण्डे खाए। पर वे हिम्मत न हारकर संघर्ष करती रहीं। घर बार छोड़कर बच्चों को कंधे पर लादे असंख्य दलित महिलाएं चावदार तालाब से पानी पीने के लिए कटिबद्ध रहीं। ऐसा जुझारू और मूल्यवान आन्दोलन जो कि नारीवादी इतिहासकारों की दृष्टि से छूट गया या छोड़ दिया गया। ऐसे आन्दोलन

की बागडोर दलित महिलाओं के हाथ में थी।

डॉ. अम्बेडकर भारतीय स्त्री खासकर, हिन्दू स्त्री जिसमें सवर्ण तथा दलित दोनों की सामाजिक आर्थिक और धार्मिक दुर्दशा को देखकर हमेशा पीड़ित रहते थे जो विशुद्ध रूप से उनकी सामाजिक कानूनी स्थिति सुधारने में संजीवनी बूटी की तरह काम करें। इसलिए उन्होंने सौ फीसदी औरतों के हक में 'हिन्दू कोड' बिल बनाया। इस हिन्दू कोड बिल को और डॉ. अम्बेडकर, दोनों को कट्टर पंथियों का भयंकर विरोध सहना पड़ा। उनके घर पर भी पत्थर बरसाये गये और संसद में भी उनका बहिष्कार किया गया। ''हिन्दू कोड बिल'' पास कराने के लिए डॉ. अम्बेडकर के साथ-साथ अनेक दलित गैर दलित महिलाओं ने भारतीय महिलाओं की सामाजिक व आर्थिक लड़ाई लड़ी है। किन्तु अफसोस की बात है कि ''हिन्दू कोड बिल'' पर चलाया जाने वाला आन्दोलन भी तथाकथित नारीवादियों के द्वारा उपेक्षित कर दिया गया। ''हिन्दू कोड बिल'' पर दुर्गाबाई देशमुख और उनके महिला जत्थे ने डॉ. अम्बेडकर के साथ गांव-गांव, नगर-नगर घूमकर सभा और जनसभाओं में भारतीय महिलाओं की सामाजिक आर्थिक दुर्दशा के चित्र खींचे।

''हिन्दू कोड बिल'' के समर्थन में दुर्गाबाई देशमुख ने तो साक्षात् दुर्गा या चन्डी का रूप धारण कर लिया था। एक महिला जो पुरानी रूढ़िवाद की पोषक थी, उन्होंने कहा कि हमारा आदर्श सीता, सावित्री और द्रौपदी है। हम सवर्ण नारियों को तलाक जैसी निन्दनीय पद्धति पर चलता नहीं देखना चाहते। हिन्दू नारी कोई आम सड़क नहीं है, जिस पर प्रत्येक व्यक्ति मनमाने ढंग से खुलेआम चल सके। दुर्गाबाई ने उनकी खूब खबर ली और कहा कि द्रौपदी के एक समय में ही पांच पति थे। क्या हम हिन्दू नारियों का भी यही आदर्श होना चाहिए? दुर्गाबाई देशमुख का मानना था कि भारत की स्वाधीनता केवल पुरुषों के लिए ही प्राप्त नहीं की गई है, बल्कि इसमें नारी जाति के कल्याण का महान उद्देश्य और उनके कल्याण का ध्येय भी शामिल है। दुर्गाबाई देशमुख मीटिंगों में ऐसे अकाट्य तर्क रखती, जिससे कट्टरवादियों के मुंह बंद हो जाते थे। तथा सारी गोष्ठी पर उनकी धाक छा जाती थी। अक्सर डॉ. अम्बेडकर और महिला साथियों द्वारा आयोजित हिन्दू कोड बिल चर्चा सभाओं में कट्टरपंथियों द्वारा सीधा हमला कर दिया जाता था और चर्चा सभाओं को जबर्दस्ती बंद करा दिया जाता था। उस समय के अखबार भी 'हिन्दू कोड बिल के खिलाफ अनेक भड़काऊ लेख छाप रहे थे उस समय देश का माहौल डॉ. अम्बेडकर और उनकी महिला साथियों के खिलाफ था। कोड बिल संसद में पास न हो सका, तब डॉ. अम्बेडकर ने विरोध स्वरूप संसद से त्याग पत्र दे दिया।

अक्सर डॉ. अम्बेडकर और महिला साथियों द्वारा आयोजित हिन्दू कोड बिल चर्चा सभाओं में कट्टर पंथियों द्वारा सीधा हमला कर दिया जाता था, और चर्चा सभाओं को जबर्दस्ती बंद करा दिया जाता था।

"हिन्दू कोड बिल" पर डॉ. अम्बेडकर का मानना था कि वे ''हिन्दू कोड बिल'' पास कराकर भारत की समस्त नारी जाति का कल्याण करना चाहते थे। उन्होंने ''हिन्दू कोड बिल'' पर विचार होने वाले दिनों में अनेक सवर्ण जाति से सम्बन्ध रखने वाली क्रूर अत्याचारी, शराबी, कबाबी, ऐबी पतियों द्वारा परित्यक्ता अनेक युवतियों और प्रौढ़ महिलाओं को देखा था, जिन्हें उनके पतियों ने त्यागकर उनके जीवन-निर्वाह के लिए नाममात्र का चार-पांच रुपया मासिक गुजारा-भत्ता बंधा हुआ था। अक्सर तो पति इतना भत्ता नहीं देते थे। ये परित्यक्ता औरतें गुलामी और दरिद्रता भरा जीवन जीने को मजबूर थीं। इन औरतों की ऐसी दयनीय दशा को देखकर इनके माता-पिता, भाई-बन्धु भी दु:खी रहते थे; क्योंकि इन परित्यक्ता औरतों के दु:ख को खत्म करने वाला कोई कानून नहीं था। 'हिन्दू कोड बिल ही वह कानून हो सकता था जो ऐसी दीनहीन, दु:खी-सताई औरतों के पक्ष में खड़ा हो सकता था। कहने का तात्पर्य यह है कि 'हिन्दू कोड बिल' भारतीय स्त्रियों की सोचनीय दशा में आमूल-चूल परिवर्तन लाने वाला कानून था। जिसमें समाज में किसी भी रूप व परिस्थिति में सताई गई औरतों के हक में दोषियों के लिए दण्ड का प्रावधान था। इस बिल के द्वारा डॉ. अम्बेडकर और उनकी महिला साथी महिलाओं की स्थिति में कानूनी सुधार व हक के लिए प्रयास कर रहे थे।

यह आन्दोलन लगभग 5 सालों तक चला जिसमें अनेक-अनेक दलित व गैर दलित महिलाएं जुड़ी। इस आन्दोलन का मकसद ही सामाजिक न्याय दिलाना था जिसका वर्षो से हनन होता आ रहा था। ऐसे क्रांतिकारी मूल्यपरक आन्दोलन पर चुप्पी साध लेना या मात्र सतही जानकारी देना न तो दलित महिला आन्दोलन के लिए लाभदायक नहीं था। सच्चा इतिहास वहीं है जो तटस्थ हो; परन्तु मुख्यधारा के प्रति अति संवदेनशील हो अगर ऐसा नहीं होता है तो वह समय दूर नहीं जब मुख्यधारा के लोग ऐसे एकांगी पक्षपाती दुर्भावना से प्रेरित होकर लिखे गये इतिहास को फाड़कर फेंकने से नहीं हिचकेंगे। ■

(लेखिका दलित महिला मुद्दों पर पैनी नज़र रखकर, कलम चलाती हैं)

सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय (भारत सरकार की योजनाएं)

भारत में अध्ययन करने के लिए अन्य पिछड़े वर्गों हेतु मैट्रिक-पूर्व छात्रवृत्ति की योजना

उद्देश्य

इस योजना का उद्देश्य उन अन्य पिछड़े वर्गों में कमजोर वर्गों के बच्चों को विशेषकर बालिकाओं में शिक्षा का प्रसार करना है जिनके माता-पिता की वार्षिक आय गरीबी रेखा से दुगुनी से नीचे है।

प्रमुख विशेषताएं

- इस योजना को राज्य सरकारों/संघ राज्य क्षेत्र प्रशासनों द्वारा निर्धारित कार्यविधि के अनुसार, कार्यान्वित और प्रशासित किया जाएगा।
- संबंधित राज्य सरकार तथा संघ राज्य क्षेत्र प्रशासन छात्रों के चयन के लिए विस्तृत कार्यविधि तैयार करेंगे।

पात्रता

- छात्रवृत्ति उन छात्रों के लिए संस्वीकृत की जाएगी जिनके माता-पिता/अभिभावक की सभी स्रोतों से आय 44,500 रूपए प्रति वर्ष से अधिक नहीं है।

अध्ययन पाठ्यक्रम की अवधि

यह छात्रवृत्ति दिवा छात्रों के मामले में कक्षा I अथवा मैट्रिक-पूर्व स्तर की किसी उत्तरवर्ती कक्षा के छात्रों और छात्रावास में रहने वाले छात्रों के मामले में कक्षा III अथवा मैट्रिक-पूर्व स्तर की किसी उत्तरवर्ती कक्षा में पढ़ने वाले विद्यार्थी को दी जाएगी। छात्रवृत्ति कक्षा X की समाप्ति पर समाप्त हो जाएगी। किसी अकादमी वर्ष में छात्रवृत्ति की अवधि 10 माह की होगी।

अध्ययन का संस्थान

यह छात्रवृत्ति केवल ऐसे संस्थानों और ऐसे मैट्रिक-पूर्व पाठ्यक्रमों के लिए स्वीकार्य होगी जिन्हें संबंधित राज्य सरकार तथा संघ राज्य क्षेत्र प्रशासन द्वारा मान्यता दी गई है।

छात्रवृत्ति तथा तदर्थ अनुदान का मूल्य

छात्रावासी

छात्रावासियों के रूप में कक्षा III से X के छात्रों को कवर किया जाएगा। छात्रवृत्ति की दरें निम्नानुसार हैं-

कक्षा III से VIII 200/- रूपए प्रतिमाह, 10 माह के लिए

कक्षा IX से X 250/- रूपए प्रतिमाह, 10 माह क लिए

दिवा छात्र

दिवा छात्रों के रूप में कक्षा I से X के छात्रों को कवर किया जाएगा। छात्रवृत्ति की दरें निम्नानुसार हैं -

कक्षा I से V 25/- रूपए प्रतिमाह, 10 माह के लिए

कक्षा VI से VIII 40/- रूपए प्रतिमाह, 10 माह के लिए

कक्षा IX से X 50/- रूपए प्रतिमाह, 10 माह के लिए

तदर्थ अनुदान

सभी छात्रों अर्थात् छात्रावासियों और दिवा छात्रों को 500/- रूपए प्रति छात्र प्रति वर्ष का तदर्थ अनुदान भी दिया जाएगा।

छात्रवृत्ति प्रदान करने के लिए अन्य शर्तें

i. छात्रों को अध्ययन पाठ्यक्रम के दौरान रोजगार लेने अथवा माता-पिता को उनके कार्य में सहायता करने की अनुमति दी जाती है।

ii. इस छात्रवृत्ति को समाप्त कर दिया जाएगा यदि छात्र योजना के सक्षम प्राधिकारी द्वारा प्रमाणित किसी अपरिहार्य कारण को छोड़कर वार्षिक पदोन्नति प्राप्त करने में असफल रहता है।

iii. यदि छात्र स्कूल का अनुशासन अथवा छात्रवृत्ति की अन्य किसी शर्त का अतिक्रमण करता है, छात्रवृत्ति स्कूल के सक्षम प्राधिकारी की संतुष्टि के अधीन या तो स्थगित की जा सकती है अथवा समाप्त की जा सकती है। राज्य सरकार/संघ राज्य क्षेत्र प्रशासन छात्रवृत्ति को सीधे भी समाप्त कर सकता है यदि वह योजना को अभिशासित करने वाले इन विनियमों के अतिक्रमण के लिए दिए गए कारणों से संतुष्ट है।

iv. एक संस्थान से दूसरे संस्थान में छात्रों का स्थानांतरण अपवादात्मक परिस्थितियों को छोड़कर किसी अकादमी वर्ष के दौरान और छात्र के अकादमी कैरियर के हित में सामान्यता अनुमत होगा।

v. इस योजना के अंतर्गत लाभ प्राप्त करने वाले छात्र को अन्य किसी मैट्रिक-पूर्व छात्रवृत्ति योजना के अंतर्गत लाभ प्राप्त करने की अनुमति नहीं दी जाएगी।

vi. छात्र की उपस्थिति होनी चाहिए जिसके लिए मानदंडों का निर्णय स्कूल के सक्षम प्राधिकारी द्वारा किया जाएगा।

छात्रवृत्ति का नवीकरण

एक बार दी गई छात्रवृत्ति का संबंधित राज्य सरकार/संघ राज्य क्षेत्र प्रशासन द्वारा आगामी अकादमी वर्ष में नवीकरण किया जा सकता है यदि योजना को अभिशासित करने वाले विनियमों के संगत खंड के अनुसार स्कूल के सक्षम प्राधिकारी द्वारा इस छात्रवृत्ति को समाप्त करने के लिए राज्य सरकार/संघ राज्य क्षेत्र प्रशासन को इसकी सिफारिश न की गई हो।

वित्तीय सहायता का पैटर्न

राज्य सरकार को 50% केन्द्रीय सहायता प्रदान की जाएगी। छात्रवृत्ति की राशि राज्य सरकारों/संघ राज्य क्षेत्र प्रशासनों द्वारा निर्धारित कार्यविधि के अनुसार, चयनित छात्रों को उस राज्य सरकार/संघ राज्य क्षेत्र प्रशासन द्वारा प्रदान की जाएगी जिससे वह जुड़ा हो। शेष 50% की राशि राज्य सरकार द्वारा वहन की जाएगी। योजना के अंतर्गत केन्द्रीय सहायता हेतु आवेदन करते समय संबंधित राज्य सरकार द्वारा सहायता के राज्य सरकार के हिस्से के लिए बजट की उपलब्धता की पुष्टि करनी होगी। संघ राज्य क्षेत्र के मामले में 100% केन्द्रीय सहायता प्रदान की जाएगी।

(विशेष जानकारी मंत्रालय के वेबसाइट www.socialjustice.nic.in पर)

महापुरूष के बत्तीस लक्षण (शारीरिक चिन्ह)

■डॉ॰ सत्येन्द्र कुमार

कपिल वस्तु के राजा शुद्धोधन के यहां एक बालक का जन्म हुआ, तभी हिमालय प्रवाक के ऋषि "अषित" को अपनी दिव्य दृष्टि तथा प्रज्ञा की अनुभूति से उसके जन्म की जानकारी हुई तो उस बालक को देखने के लिए कपिलवस्तु के राजमहल में पधारे, और बालक को देखने की इच्छा व्यक्त की।

अषित ऋषि ने देखा कि बालक बत्तीस (32) महापुरूष लक्षणों तथा अस्सी (80) अनुव्यञ्जनों (गौंड लक्षण) से मुक्त है। उसका शरीर शुक्र और ब्रह्मा के शरीर से भी अधिक दीप्त है और उसका तेजोमण्डल उनके तेजों मण्डल से लाख गुणा अधिक प्रदीप्त है। उनके मुख से तुरन्त यह वाक्य निकला "निस्सन्देह यह बालक अद्भुत पुरूष है।" और भविष्य वाणी की कि अगर यह बालक बड़ा होकर गृहस्थजीवन में रहता है तो सम्यक चक्रवर्ती राजा होगा और यह घर छोड़ सन्यासी बनता है तो यह बुद्धत्व प्राप्त कर जन कल्याणी होगा।

एक समग्र भगवान बुद्ध श्रावस्ती स्थित अनायपिण्डिक श्रेष्टी द्वारा निर्मापित जेतवनाराम में साधना हेतु विराजमान थे। वहां भगवान ने "भिक्षुओ"! सम्बोधन से सम्बोधित किया। "हां भन्ते" कहकर भिक्षुओं ने उत्तर दिया।

भगवान ने उपदेश प्रारम्भ किया-भिक्षुओ! विद्वानों ने किसी महापुरूष के ये बत्तीस (32) महापुरूष लक्षण (शरीरिक चिन्ह) बताये हैं, जिनसे युक्त उस महापुरूष की इस संसार में दो ही स्थितियां होती है, तीसरी नहीं - (क) यदि वह गृहस्थ धर्म (गृहस्थ जीवन) में रहता है तो वह धार्मिक-धर्माचारी - सम्पन्न चक्रवर्ती राजा होता है, और वह सभी जनपदों के सर्वोच्च राज पथ पर स्थिरता प्राप्त चारों छोरों (अन्त) तक समग्र पृथ्वी का विजेता एवं सातों रत्नों से युक्त होता है। सात रत्न ये हैं- चक्र रत्न, हस्ति रत्न, अश्व रत्न, मणि रत्न, स्त्री रत्न, गृह पति रत्न एवं सातवां परिणायक रत्न (नेता)। इसके सुन्दर एवं शत्रु संहारक वीर पुत्र होते हैं। वह इस समुद्र पर्यन्त पृथ्वी पर शास्त्र के बिना ही धर्म के सहारे अपने वश में रखता हुआ इस पर शासन करता है। (ख) और वह घर से बे घर हो अर्थात गृहस्थ धर्म को छोड़ कर संसार से प्रव्रज्या (सन्यास) ले लेता है वह लोक में अपने आवागमन की परम्परा नष्ट करता हुआ जन कल्याणी सम्यक सम्बुद्ध होता है।

भिक्षुओ! ये बत्तीस (32) महापुरूष-लक्षण कौन से हैं, जिनसे युक्त उस महापुरूष की दो ही स्थितियां (1) सम्यक चक्रवर्ती राजा या (2) सम्यक सम्बुद्ध होता है।

बत्तीस लक्षण:-

(1) ....सुप्पतिट्ठितपादो............... महापुरूष के पैर के तलवे समतल होते हैं और वह भूमि पर दोनों पांव समान समतल पड़ते हैं। उनमें गड्ढ़ा कम होता है तथा खड़ा होने पर दोनों पैर समान दिखते हैं।

(2) ....हेटठायादतलेसु चक्कानि जातानि..............महापुरूष के दोनों पांव के नीचे तलवों में सर्वाकार परिपूर्ण नाभि तथा नेमि से युक्त हजारों आरों वाले चक्र होते हैं।

(3) ....आयतपण्हि............. महापुरूष के पैरों की विस्तृत (आयत) पार्ष्णि (एड़ी) वाला होता है, अर्थात पांव की एड़ियां सामान्य जन की एड़ियों की तुलना में अधिक लम्बी चौड़ी होती है।

(4) ....दीघङुलि.............महापुरूष के हाथ और पैरों की अंगुलिया लम्बी होती हैं।

(5) ....मुदुतलुनहत्थपादो............. महापुरूष के हाथ और पैर मृदु (कोमल) एवं चिकने होते हैं। रूखे कठोर नहीं।

(6) ....जाल हत्या पादो............ महापुरूष के हाथ और पैरों की अंगुलियों के बीच थोड़ी सी दूरी में रूकी जाल नुमा त्वचा होती है जिससे अंगुलियों के बीच कोई बिबर (छिद्र) नहीं रहता जैसे हंस बत्तख आदि के पंजों के बीच में।

(7) ....उस्सङ्ग पादों............ महापुरूष के पैर के गुल्फ (टखने) सामान्य जनके टखनों से कुछ ऊंचे उठे हुए प्रथक दिखाई देते हैं।

(8) ....एणिजङ्घे............महापुरूष की जांघें हिरण की तरह की पिडलियों की तरह अर्थात गठन में सुन्दर होती हैं।

(9) ....ढितकोअनोनमन्तो. ....परिभज्जति........ ....महापुरूष सीधा खड़ा हुआ (बिना झुके) ही दोनों हाथों की हथेलियों से अपने घुटनों का स्पर्श कर हथेलियों से मसल लेता है। अर्थात घुटनों की लम्बी भुजाएं होती हैं।

(10) ....कोसोहित वत्थ गुय्हो............महापुरूष की वस्तिगुह्य (पुरूष मूत्रेंद्रिय) कोषाच्छादित होती है।

(11) ....सुवष्ण वष्णों..... ....कञ्चन...... महापुरूष सुवर्ण वाला एवं कंचन वर्ण की त्वचा वाला होता है।

(12) ....सुखुमच्छ्वि............ उपलिम्पति.........महापुरूष की चमड़ी पर सूक्ष्म छवि वाले त्वचा बड़ी होती है, जिससे उसके शरीर पर मैल तथा धूल नहीं जमता।

(13) ....एकेक लोमों............ महापुरूष के एक रोग कूप में एक ही रोग होता है।

(14) ....उद्धग्ग लोमो............ महापुरूष के रोम (देह के बाल) अञ्जन के समान गहरे नीले (श्याम) तथा दाहिनी तरफ (दक्षिण वर्त) घूमे हुए कुण्डलित (घुंघराले) होते हैं।

(15) ....ब्रह्यु जुगतो............ महापुरूष का शरीर लम्बा और सीधा होता है, जिसके कारण लोग उसे ब्रह्म अजु (अजी) कहते हैं।

(16) ....सत्तुस्सदो............महापुरूष का शरीर सातों अंगों में पूर्ण आकार वाला होता है। अर्थात हाथ, दोनों पांव, सामने और पीछे के धड़ और चेहरे सहित मस्तिष्क, शरीर के सातों अंग विशाल और पूर्ण आकार के होते हैं।

महापुरूष सीधा खड़ा हुआ (बिना झुकें) ही दोनों हाथों की हथेलियों से अपने घुटनों का स्पर्श कर हथेलियों से मसल लेता है। अर्थात घुटनों की लम्बी भुजाएं होती हैं।

महापुरूष सुवर्ण वाला एवं कंचन वर्ण की त्वचा वाला होता है।

महापुरूष का वक्ष आदि (शरीर का ऊपरी भाग) सिंह के समान विस्तृत (लम्बा चौड़ा) है।

(17) ....सीहपुब्बद्ध कायो............ महापुरूष का वक्ष आदि (शरीर का ऊपरी भाग) सिंह के समान विस्तृत (लम्बा चौड़ा) है।

(18) ....चितन्तरंसो............ महापुरूष के कन्धों के बीच और ऊपरी भाग उपचित (मांसल भरापूरा) होता है।

(19) ....निग्रोद्य परिमण्डलो............ महापुरूष के शरीर की ऊंचाई और चौड़ाई न्यग्रोद्य (वटवृक्ष) की तरह अभण्था (व्यास) समान होती है। अर्थात खड़े होकर दोनों हाथ फैलाकर चौड़ाई और पैर स्वर्ण से लेकर सिर के ऊपरी भाग तक ऊंचाई दोनों समान होती हैं।

(20) ....समवद्दक्खन्धो............ महापुरूष के दोनों कन्धे समान गोलाई ओर समान परिमाण अर्थात ऊंचाई दोनों की समान होती है।

(21) ....रसग्ग सग्गी............ महापुरूष की धमनियों में रक्त प्रभाव ठीक ढंग से होता रहता है।

(22) ....सीहहनु........... ..महापुरूष की ठोड़ी (हनु) सिंह की ठोड़ी की तरह चौड़ी होती है।

(23) ....चत्तालीसदन्तो.. ....महापुरूष के दांतों की संख्या चालीस होती है। दांतों का जबड़ा भरा हुआ होता है। जिससे चेहरा सुन्दर, शोभायमान होता है।

(24) ....समदन्तों.......... ...महापुरूष के सभी दांत समान अथवा कोई छोटा-बड़ा ऊंचा-नीचा नहीं होता है।

(25) ....अमिरल दन्तो... ....महापुरूष के दांतों के बीच खाली जगह (बिबर=छेद) नहीं होती है।

(26) ....सुसुक्कदाठो............ महापुरूष की सभी दाढ़ अत्यन्त श्वेत होती हैं।

(27) ....पहूर्ताब्हो............महापुरूष की जीभ (जिह्वा) लम्बी और पतली होती है।

(28) ....ब्रह्मस्सरो............महापुरूष

का स्वर सुरीला एवं श्रुति मधुर होता है, मानों करवीक पक्षी बोल रहा है, अर्थात कोकिला स्वर श्रेष्ठ ध्वनि वाला होता है।

(29) ....अभिनीलनेत्तो............ महापुरूष की आंखों की आभा अलसी के फूल की तरह गहरी नीली होती है।

(30) ....गोपमुखो............महापुरुष की आंखें बड़ी-बड़ी और पलकें गऊ के पलकों के समान अर्थात पलकों के बाल लम्बे-लम्बे होते हैं।

(31) ....अण्णममुकत्तरे... ....महापुरूष की दोनों भौंहों के बीच श्वेत कोमल कपास की तरह ऊर्ण रोमराजि (रोमावली) होती है।

(32) ....उण्हीस सीसो.... ....महापुरूष के सिर का आकार पगड़ी की तरह चारों ओर समान होता है और ऊपर से कुछ उठा हुआ होता है।

भिक्षुओ! विद्वानों ने यह बत्तीस (32) लक्षण (शरीर-चिन्ह) बताये है, जिनसे युक्त महापुरूष की दो ही स्थितियां होती हैं। गृहस्थ-जीवन भोगने पर चक्रवर्ती राजा, घर छोड़ सन्यास लेने पर सम्यक सम्बुद्ध होता है। 2

भगवान बुद्ध की सुन्दर काया से सम्बन्धित एकअन्य प्रसंग-

बुद्धत्व प्राप्ति के उपरान्त पिता महाराजा शुद्धोदन के प्रबल आग्रह पर वृहद भिक्षु संघ के साथ भगवान कपिलवस्तु आये और राजधानी के राजमार्ग पर भिक्षाटन के लिए निकले तो माता यशोधरा पुत्र राहुल को उसके अनजाने पिता का प्रथम दर्शन कराते हुए उनके रूण-सौंदर्य का बखान करती हुई इस प्रकार उनका परिचय देती हैं-

............लक्खणचित्ति पुण्णसरीरो........

.....जिनका सकल शरीर महापुरूष के लक्षणों से परिपूर्ण है।

............चक्कबरडिक्तरत्तसुपादो..........

बुद्धत्व प्राप्ति के उपरान्त पिता महाराजा शुद्धोदन के प्रबल आग्रह पर वृहद भिक्षु संघ के साथ भगवान कपिलवस्तु आये और राजधानी के राजमार्ग पर भिक्षाटन के लिए निकले तो माता यशोधरा पुत्र राहुल को उसके अनजाने पिता का प्रथम दर्शन कराते हुए उनके रूण-सौंदर्य का बखान करती हुई इस प्रकार उनका परिचय देती हैं। जिनका सकल शरीर महापुरुष के लक्षणों से परिपूर्ण है।

...जिनका सकल शरीर महापुरूष के लक्षणों से परिपूर्ण है।

............अञ्जनवण्णसुनील सुकेसो......

.......जिनके (मुंडित सिर पर उगे नन्हे-नन्हे) केश सुरसे के समान सुनील वर्ण हैं।

............कञ्चनपटटविसुद्धललाटो.......

......जिनका ललाट विशुद्ध कंचन की भांति दीप्त है, आदि-आदि।

............रासहि तुम्ह पिता नरसीहो......

.......यह जो नरो में सिंह जैसे दिखते हैं, यही तुम्हारे पिता हैं। ऐसा उसके पिता की देहकाया का परिचय देते हुए असीम पुश्यपारमिताओं की स्वामिनी राहुल-माता उनकी धर्म काया का भी जरा सा उल्लेख करती हैं।

-सीलसमाधिपतिद्वितचित्तो-शील और समाधि में इनका चित्त प्रतिष्ठित है। तथा - लोकहितय गतो नखीरो- ये नर वीर लोक हित के लिए गृहत्यागी हुए है।

इस वर्णन के बाद राहुल की माता अच्छी तरह जानती हैं कि गृहत्यागी भगवान बुद्ध के पास कोई राजसी विरासत नहीं है। उनके पास तो केवल चार अपने पुत्र को इसी की प्राप्ति के लिए भगवान के पास भेजती है। पर नन्हा बालक इसे क्या समझे वह तो शरीर की पहचान के सहारे ही अपने पिता के समीप जाता है और धर्म काया के सानिध्य में आते ही उस के मुंह से बरबस निकल पड़ता है- "सुखाते समण छायापि" श्रमण तेरी छाया सुखद है।'' इस प्रकार के भौतिक-रूपकाया को तो त्रिपिटिक में अनेक जगहों पर वर्णन है- "भवतु सब्ब मंगलं"

सदर्भ-

* 1- भगवान बुद्ध और उनका धम्म - असित ऋषि का आगमन, द्वारा बाबासाहेब डॉ॰ अम्बेडकर जी।
* 2- दीघ निकाय महाबग्ग महापदान सुत्त विपस्सी बुद्ध की जीवनी -(3) शरीर बत्तीस लक्षण। (3) पायिक बग्ग, लक्शन सुत्त पृष्ठ संख्या 706-708 (तिपिटिक)।
* 3- नरसीहगाथा-सुत्त पिटक। तथा "त्रिपिटिक में सम्यक संबुद्ध" के भौतिक रूप काया में -द्वारा आचार्य श्री सत्यनारायण जी गोयन्का
* 4- महावग्ग 105 राहुल वत्थु।

■

एक ज़िम्मेदार व्यक्ति में अपने सीखे हुए को भूलने की क्षमता और पुनर्विचार करके अपने विचारों में बदलाव करने का साहस होना चाहिए।

-डॉ. बी.आर. अम्बेडकर

स्वच्छ भारत अभियानः स्वर्णिम पहल

■डॉ. आर. एम. एस. विजयी

भारत को सुदृढ़ और समृद्ध बनाने के लिए कृतसंकल्प विकास पुरूष के रूप में विख्यात प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी जी ने देश और दुनिया में अपनी धमाकेदार उपस्थिति दर्ज की है। पिछले चार महीने की हुकूमत पर यदि गौर करते हैं तो स्पष्ट हो जाता है कि इस व्यक्ति ने बहुत ही होशियारी से हुकूमत के ताने-बाने को बखूबी अंजाम दिया है। शपथ ग्रहण समारोह में पड़ोसी देशों के राष्ट्रध्यक्षों को आमंत्रित करके हिन्दुस्तान की नेकनीयती का संदेश दुनिया को दिया। चीन के राष्ट्रपति शी जिन पिंग के भारत आगमन से पहले ही चीनी दस्ते चुमग में घुस आए थे, परन्तु मोदी जी ने बिल्कुल सामान्य जैसा मानते हुए अहमदाबाद में चीनी राष्ट्रपति का जोरदार स्वागत किया और चीनी राष्ट्रपति तथा भारतीय प्रधानमंत्री को एक ही झूलें पर झूलते हुए विस्मय भरी नजरों से भरी दुनिया ने देखा। दोनों राष्ट्र प्रमुखों के एक दूसरे देश के महत्व को बखूबी समझा ओर इसका परिणाम यह हुआ कि सीमा पार वातावरण एकदम शांत हो गया। शक्ति संतुलन की नई पहल के रूप में मोदी जी के लिए जापान और अमेरिका अपना अलग ही मायने रखती है। बराबरी के स्तर पर ओबामा की दोस्ती देखने लायक थी। इसमें संदेह नहीं कि दुनिया का कोई भी देश भारत की उपेक्षा नहीं कर सकता।

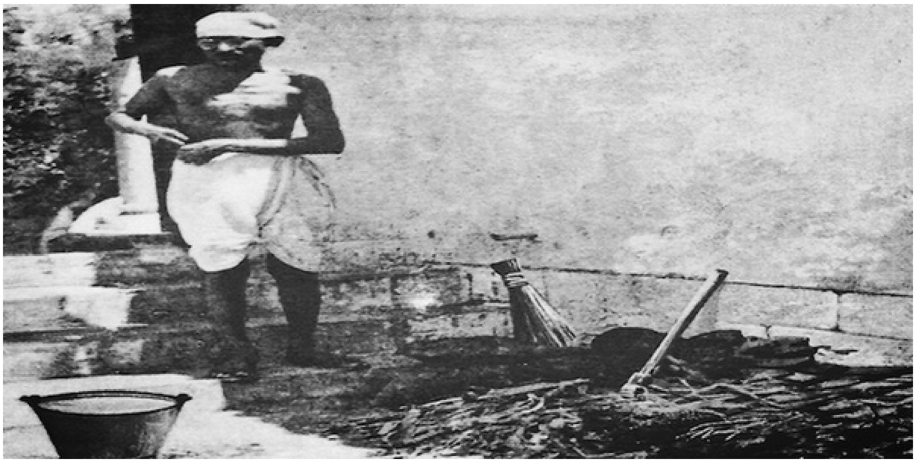

घरेलू मोर्चे पर भी मोदी जी ने देश को गतिमान बनाने में कोई कसर नहीं छोड़ी, इनकी छोटी सी पहल पर पांच करोड़ नए लोगों ने स्वयं को बैंकों से जोड़ा, जो एक विश्व रिकार्ड बना। स्वच्छ भारत अभियान की एक स्वर्णिम पहल नरेन्द्र मोदी जी ने महात्मा गांधी के जन्म दिवस के अवसर पर की, जिसकी कामना भी नहीं की जा सकती थी। आपने गांधी जयन्ती के दिन उन्हें दिल्ली की वाल्मीकि बस्ती में झाड़ू लगाते हुए देखा, इससे प्रेरित होकर देश के मन्त्रियों के साथ-साथ राष्ट्रीय स्तर के अभिनेता, पत्रकार, एन.जी.ओ. और जन-जन में स्वच्छता के प्रति नया जज्बा पैदा हुआ और सभी ने इसे राष्ट्रीय कर्म मानकर भरपूर हाथ बंटाया। यह पहली बार हुआ है कि सरकार द्वारा घोषित कार्यक्रम को सामान्य लोगों ने अपना माना। विपक्ष ने इसे ढोंग बताने के साथ-साथ गांधी जी को छीनने का आरोप लगाया। इसका मोदी जी ने करारा जबाब दिया, उन्होंने कहा- "कांग्रेस के लोग सोचते हैं कि मोदी ने गांधी जी को उनसे छीन लिया है। वह महात्मा हैं और उन्हें छोड़ दिया है" विपक्ष इसे ढोंग का नाम दे सकता है, पर यह सच है कि देश ....बातों से नहीं बनते और इसके सतत निर्माण के लिए मूलभूत गुणों की आवश्यकता होती है। इसमें कोई दो राय नहीं कि यदि हम अपना आस-पास का परिवेश साफ रखते हैं तो हमारी आत्मा सफाई और सलीका पसंद हो जाती है। दुनिया में इस हकीकत को सबसे पहले महात्मा गांधी ने रेखांकित किया। उन्होंने दक्षिण अफ्रीका और भारत के अपने आश्रमों में सबसे पहली शर्त सफाई की रखी थी। उनका दृढ़ विश्वास था कि गंदगी में रहने वाले लोग कभी भी बड़े काम नहीं कर सकते।

वैसे तो महात्मा गांधी सत्य को सर्वाधिक महत्व देते थे और मानते थे कि नैतिक, सांस्कृतिक और राजनैतिक स्तर पर पूर्ण स्वच्छता होनी चाहिए। उन्हीं के शब्दों में मैं कभी विश्वनाथ के दर्शन के लिए गया। गलियों में जाते हुए यही सोच रहा था कि अगर कोई अजनबी यहां आए तो हिंदुओं के बारे में क्या सोचेगा? बड़े दर्द के साथ कह रहा हूं। क्या ये ठीक है कि हमारे आस-पास की गलियां इतनी गंदी हो? अगर हमारे मंदिर की सादगी स्वच्छता के नमूने न हो तो हमारा स्वराज्य कैसा?

हमारे वर्तमान पर ही हमारा भविष्य निर्भर करता है और हमारे आज से कल की रूप रेखा बनती है।"

स्वच्छ भारत की सोच बहुत पहले से गांधी जी के मन में थी। जब सन् 1903 में वे पहली बार काशी आए थे, हालांकि तब वे बहुत जाने-माने व्यक्ति नहीं थे। उस समय काशी के विश्वनाथ मंदिर में पूजा के बाद उन्होंने अपनी डायरी में लिखा था-जिस जगह पर लोग ध्यान और शांति के माहौल की उम्मीद करते हैं, वहां यह बिल्कुल नदारद है। मंदिर पहुंचने पर मेरा सामना सड़े हुए फूलों की दुर्गंध से हुआ। मैंने देखा कि लोगों ने सिक्कों को अपनी भक्ति का जरिया बनाया हुआ है, जिसकी वजह से न केवल संगमरमर के फर्श में दरारें दिखने लगी हैं, बल्कि इन सिक्कों पर धूल के जमने से वहां काफी गंदगी भी दिख रही थी। ईश्वर की तलाश में मैं मंदिर के पूरे परिसर में भटकता रहा, पर मुझे धूल व गंदगी के सिवाय कुछ न दिखा। इसके बाद गांधी जी इलाहाबाद, जहां उन्होंने कहा-"मुझे यह जानकर बड़ा धक्का लगा है कि प्रयाग की पवित्र नदियां भी नगर पालिका के गंदे नाले के पानी से अपवित्र की जा रही है।'' कुछ साल बाद महात्मा गांधी जब हरिद्वार गए तो वहां उनका अनुभव और भी बुरा था। तब उन्होंने कहा कि यहां जिस तरह से नदी को गंदा किया जा रहा है, वह एक बड़ा अपराध है। यह शुभलक्षण है कि इस अपराध बोध से मुक्त होने के लिए नदियों को निर्मल करने की मुहिम पहले ही प्रारंभ की जा चुकी है।

सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक सोच तथा परिवेश भिन्न होने के बावजूद उन्हीं के समकालीन विश्व की अग्रणीय शख्सियत डॉ॰ भीमराव अम्बेडकर भी स्वच्छता, सच्चाई और नैतिकता के मामले में गांधी जी के समान ही विचार रखते थे। उनका प्रभावशाली व्यक्तित्व और आकर्षक वेशभूसा स्वच्छता का बेजोड़ नमूना थे। वे अपने दलित भाइयों की दरिद्रता और अस्वच्छता दूर करने के लिए बराबर झकझोरते रहते थे। डॉ॰ अम्बेडकर जीवन भर सलीका और सफाई पसन्द रहे। उनका चरित्र जितना निर्मल था, स्वच्छता के प्रति उनकी दृष्टि उतनी ही गहरी थी। उन्होंने सार्वजनिक जीवन में भी स्वच्छता की बराबर वकालत की।

आप सहमत होंगे कि जिस 'स्वच्छ भारत' अभियान का प्रारंभ गांधी जयन्ती से हुआ, इसकी निहायत आवश्यकता थी। इसमें कोई दो राय नहीं हो सकती। प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्रमोदी जी को इस बात का श्रेय भी देना ही होगा, जिन्होंने सार्वजनिक सफाई को उच्च प्राथमिकता दी और स्वतंत्रता दिवस के अवसर पर राष्ट्र के नाम अपने पहले संबोधन में इसे दृढ़ता के साथ रेखांकित किया। उनके द्वारा इस मुद्दे को महत्व दिए जाने से सबसे बड़ा फायदा यह हुआ कि इस ओर लोगों का ध्यान आकर्षित हुआ और उसी समय से लोगों ने इस बारे में सोचना शुरू कर दिया। लोगों की जागरूकता बढ़ी। उसी का परिणाम यह हुआ कि लोगों ने उम्मीद से ज्यादा इस मुहिम में भाग लिया और इसे पूरी तरह से सफल बनाया।

लेकिन, जैसा कि विपक्ष को अशंका है कि यह सिर्फ एक रस्म अदायगी और निगरानी की जरूरत है। भारत में गंदगी की वजह साधारण नागरिकों से लेकर संभ्रांत लोगों तक में इसके प्रति लापरवाही है और फिर सफाई सिर्फ झाडू लगाने या शौचालय बनाने से ही नहीं हो जाएगी। इस प्रक्रिया में जो भी कड़ियां हैं उन्हें जोड़े बिना लक्ष्य को प्राप्त नहीं किया जा सकता और उनमें से एक भी कड़ी न रहने से पूरी प्रक्रिया के निरर्थक होने की संभावना बनी रहेगी, जैसा कि हमने अब तक गंगा और जमुना के असफल अभियानों में देखा है। अरबों रूपये इस मद में खर्च हो गए और इन नदियों की थोड़ी सी भी सफाई नहीं हो सकी। आंकड़े बताते हैं कि दुनिया में लगभग सौ करोड़ लोग खुले में शौच जाते है और ऐसे लोगों में 60 प्रतिशत के आसपास भारत में हैं। इससे देश में शौचालय बनाने की अहमियत का पता चलता है। इस हकीकत से भी इंकार नहीं किया जा सकता कि अभी तक शौचालय बनाने के सभी कार्यक्रम इसलिए सफल नहीं हो पाए कि अधिकांश ....में शौचालय बनाना जितना जरूरी है, उसका नियमित रख-रखाव उससे भी ज्यादा जरूरी है। शौचालय के दीर्घ अवधि तक उपयोग की मुहिम कई ग्रामीण इलाके में इसलिए नहीं चल पाई कि शौचालय के भर जाने पर उसका क्या किया जाए, इसकी जानकारी और योजना का भी अभाव रहा। इसलिए इस पर बराबर ध्यान देने की जरूरत है कि यदि सड़कों से कूड़ा हटाया जाए अथवा

स्वच्छ भारत की सोच बहुत पहले से गांधी जी के मन में थी। जब सन् 1903 में वे पहली बार काशी आए थे, हालांकि तब वे बहुत जाने-माने व्यक्ति नहीं थे। उस समय काशी के विश्वनाथ मंदिर में पूजा के बाद उन्होंने अपनी डायरी में लिखा था-जिस जगह पर लोग ध्यान और शांति के माहौल की उम्मीद करते हैं, यहां वह बिल्कुल नदारद है।

शौचालय बनाया जाए तो आगे भी उस गंदगी को ठिकाने लगाने का समुचित प्रबंध हो। अगर शहरों की गंदगी नदियों में बहा दी जाए और कूड़े के ढेर शहर की सीमा के बाहर विद्यमान रहें तो ऐसी सफाई के कोई मायने नहीं रह जाते।

फिर इस हकीकत से भी इंकार नहीं किया जा सकता कि हम जितनी सफाई करते हैं और उससे जमा होने वाली गंदगी को किसी दूसरी जगह छोड़ आते हैं वहां पर पर्यावरण को नुकसान पहुंचता है। इसी प्रकार व्यापारिक उद्योगों से निकलने वाले प्रदूषित जल या अन्य प्रकार के मलवे का भी उचित प्रबंध करना होगा और उसे भी इस अभियान का हिस्सा बनाना होगा। सड़क पर कूड़ा फेंकने की व्यक्तिगत आदत को भी बदलना होगा, तब हम देश की वास्तविक सफाई कर पाएंगे। भारत के लोग घर की सफाई के प्रति तो बराबर जागरूक हैं, मगर घर की सीमा के बाहर गंदगी फैलाने में जरा भी संकोच नहीं करते। इस प्रकार की आदतों में परिवर्तन के लिए सरकार ही नहीं, बल्कि समाज को भी सक्रिय भूमिका निभानी होगी।

इसमें शक की कहीं भी गुंजाइश नहीं कि महात्मा गांधी ने सफाई को आजादी के आंदोलन का हिस्सा इसलिए बनाया था कि समाज को बाहरी गंदगी, उनके भीतर व्याप्त गंदगी को ही दर्शाती है, इसलिए गांधी जी सफाई को समाज में फैली बुराइयों और कमजोरियों को दूर करने का माध्यम बनाना चाहते थे। भारतीय समाज में गंदगी का एक बड़ा कारण जाति प्रथा है, जो एक नासूर बना हुआ है। उच्च वर्गीय लोग यह मानते है कि कूड़ा चाहे उनके सामने फैला हो, उसे हटाना उनका काम नहीं है। इस नए सफाई अभियान से हम उम्मीद कर सकते हैं कि महात्मा गांधी की दिखाई राह पर चल कर मोदी जी की मुहिम में सहयोगी बनकर गली, मोहल्लों, नदी-नालों की सफाई ही नहीं सार्वजनिक जीवन में भी देश और समाज की वास्तविक सफाई करने में सक्षम होंगे और यह अभियान केवल औपचारिकता मात्र नहीं रहेगा तथा भारत अपने प्राचीन गौरव और समृद्धि को पाने में सक्षम होगा।

समाज को बाहरी गंदगी, उनके भीतर व्याप्त गंदगी को ही दर्शाती है, इसलिए गांधी जी सफाई को समाज में फैली बुराइयों और कमजोरियों को दूर करने का माध्यम बनाना चाहते थे। भारतीय समाज में गंदगी का एक बड़ा कारण जाति प्रथा है, जो एक नासूर बना हुआ है।

स्वच्छता अभियान को सार्थक और कारगर बनाने के लिए यह अपेक्षित है कि जाति के आधार पर दिलों में बैठी हजारों सालों की नफरत की गंदगी को हटाया जाए, वंचित तबकों के तिरस्कार को बंद करें। जब तक यह नहीं होगा, तब तक एक बेहद गहरी राजनीतिक समस्या को गैर-राजनीतिक बनाने तथा थोड़ी भारतवासियों .... पर बनाए रखने के लिए गांधी जी के नाम ....इस्तेमाल करना ही समझा जाएगा। ■

राजनीतिक लोकतंत्र तब तक जीवित नहीं रह सकता जब तक वह सामाजिक लोकतंत्र पर आधारित न हो। सामाजिक लोकतंत्र का क्या अर्थ है? यह जीवन की ऐसी राह है जिसमें स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व को जीवन-सिद्धांत के रूप में मान्यता प्राप्त होती है।

-डॉ. बी. आर. अम्बेडकर

Political democracy cannot last unless there is at the base of it, a social democracy. What does social democracy mean? It means a way of life which recognizes liberty, equality and fraternity as the principles of life

–Dr. B.R. Ambedkar

बाल्मीकि जयंती पर विशेष:

भारत के आदि कवि महर्षि बाल्मीकि

■ रोहित कुमार

किसी भी महापुरूष का जन्म दिवस मनाने का केवल यही उद्देश्य है कि उस महापुरूष के जीवन से प्रेरणा लें। उनकी शिक्षाओं और सिद्धांतों को यथार्थ और व्यवहारिक रूप में अनुसरण करें तथा उनके मत एवं विचारों का यथा सम्भव प्रचार-प्रसार करें तथा सच्चे अनुयायियों की संख्या में वृद्धि करें। इसी लक्ष्य की प्राप्ति के उद्देश्य से जन्म-दिवस मनाया जाता है। हम भी आज महर्षि वाल्मीकि के जन्मदिवस के अवसर पर उसी लक्ष्य व उद्देश्य की प्राप्ति के लिए उसी कर्त्तव्य परायणता का कृत संकल्प लेकर दृढ़ प्रतिज्ञा करें। तभी महर्षि वाल्मीकि का यथार्थ रूप में हमारे लिए जन्म-दिवस मनाना सफल है, अन्यथा एक दिखावा मात्र है, छल है, प्रपंच है।

महर्षि वाल्मीकि का जन्म सहस्रों वर्ष पहले हुआ था। निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता है कि इनका जन्म-युवावस्था में परिवार का मोह छोड़कर वे तपस्या में इतने लीन हो गये कि इनके शरीर में दीमकों ने अपनी बांबी बना ली। महर्षि को इसका पता नहीं चला। इसी घटना के कारण नाम वाल्मीकि पड़ा।

महर्षि वाल्मीकि ने आश्रम में रहकर ही संस्कृत भाषा में 'रामायण' की रचना की। रामायण के द्वारा ही हम श्रीराम के चरित्र के विषय में जानते हैं। इसके अलावा हमें उस समय के लोगों के रहन-सहन, खान-पान, पहनावा आदि के विषय में भी जानकारी मिलती है। महर्षि वाल्मीकि महान कवि एवं शिक्षक भी थे। रामायण महाकाव्य भारत में ही नहीं बल्कि विश्व में प्रसिद्ध है। महर्षि वाल्मीकि को उनकी नीति, शिक्षा एवं रचना के कारण आज भी आदर और सम्मान के साथ याद किया जाता है।

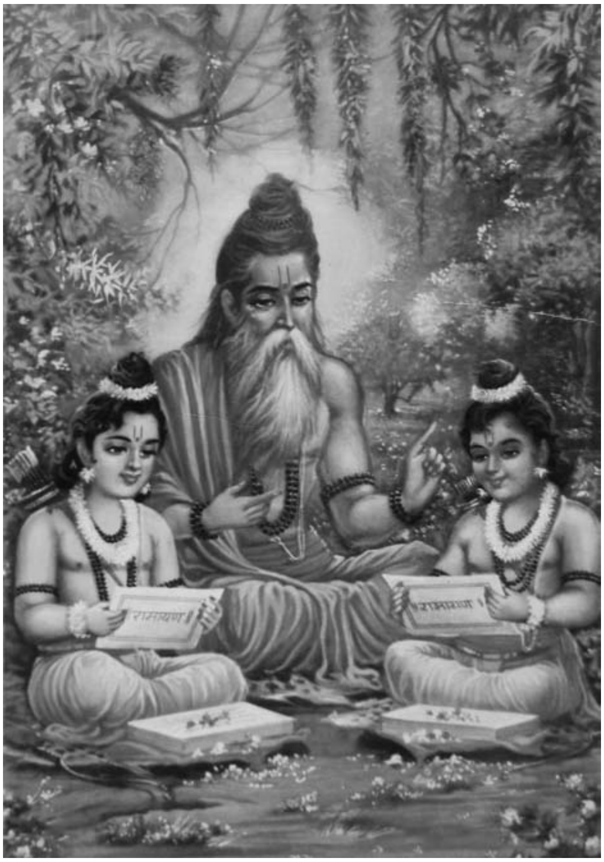

महर्षि वाल्मीकि द्वारा संस्कृत में लिखित रामायण एक अमर काव्य है, जो कि विश्व की उन्नत भाषाओं में उच्च स्थान रखता है। 24 हजार श्लोकों का यह महाकाव्य विश्व के अनेक महाकाव्यों में सबसे प्राचीन माना जाता है। यह भारतीय साहित्य की सर्वश्रेष्ठ रचना है, जिसे मानव जाति के लिए "लोक सुखीये परलोक सुहेले" का उद्देश्य स्पष्ट रूप में पेश किया है। वाल्मीकि की रामायण में काव्य सहज और विचार की सूक्ष्मता इसको अद्वितीय ग्रंथ का दर्जा प्रदान कराती है।

वाल्मीकि ने रामायण में "फर्श से अर्श" तक का विस्तार पेश किया है। अच्छे मनुष्य से ही अच्छे समाज और अच्छे राष्ट्र का निर्माण होता है। मानव परिवार एक ऐसी इकाई है, जो सभी छोटे-बड़े सगंठनों की मूल इकाई कही जा सकती है। रामायण में घर, परिवार, समाज और राष्ट्र के प्रति कर्त्तव्यों का पालन करने एवं मानवता के लिए विस्तार पूर्वक बहुमूल्य ज्ञान अंकित है जो आज भी समस्त मानवता के लिए कल्याणकारी सिद्ध हो रहा है। यह ज्ञान हमें अच्छा इन्सान बनने की प्रेरणा देते रहने का अनन्त भण्डार है। इसलिए रामायण ग्रंथ को जन साधारण में बहुत ख्याति प्राप्त हुई है।

वाल्मीकि ऋषि द्वारा रचित संस्कृत भाषा में श्री रामचन्द्र जी का इतिहास है। जो एक मनोहर काव्य है। जिससे वाल्मीकि रामायण के नाम से जाना जाता है। इसके सात काण्ड (बाल, अयोध्या, अरण्य, किष्किन्धा, सुन्दर, लंका, और उत्तरा है। इसमें 647 अध्याय और 24000 श्लोक है। इसका अनुवाद अनेक भाषाओं में हो चुका है।

वाल्मीकि के कथनानुसार भगवान रामचन्द्र ने दस हजार वर्ष शासन किया अपने पुत्रों को कौशल राज्य पर स्थापित कर सरयू नदी के किनारे "गोपतार घाट" पर सांसारिक जीवन त्याग दिया। अपनी रचना में वाल्मीकि दो बार अपना जिक्र भी करते हैं। एक तो उस समय जब श्रीराम चित्रकूट जाते समय, लक्ष्मण, सीता के साथ कुछ देर के लिए इनके आश्रम में रूके। वाल्मीकि जी श्रीराम का स्वागत करते हुए केवल एक शब्द "असआत्मा" (बैठने की कृपा करो) कहते हैं। दूसरी बार उत्तर काण्ड में लव और कुश द्वारा रामायण गाकर सुनाने के उपरान्त श्रीराम वाल्मीकि जी को कहते हैं कि वह सीता जी को भी दरबार में लाएं। सीता जी मंडप में आती हैं और वाल्मीकि जी कहते हैं कि मैं अपने पिता का दसवां पुत्र हूं और आप श्रीराम रघुवंशी हैं।

वाल्मीकि जी महान तपस्वी भी थे। इनकी प्रशंसा महाकवि कालिदास ने अपनी रचना "मेघ संदेश" में की है। प्रसिद्ध स्वतंत्रता सेनानी तथा आजाद भारत के प्रथम भारतीय गर्वनर जनरल श्री राज गोपालाचार्य (राजाजी) ने रामचन्द्र जी के जीवन काल में ही रामायण की रचना की। वाल्मीकि ने श्रीराम को परमात्मा के अवतार के रूप में नहीं अपितु मर्यादा पुरूषोत्तम महान और उत्तम इंसान के रूप में पेश किया है। शताब्दियों उपरान्त कम्बन और तुलसीदास जी ने रामायण लिखी और उसमें श्रीराम को विष्णु का अवतार बताया। ब्रह्माजी के कथनानुसार जब तक संसार में पर्वत खड़े रहेंगे तथा नदियां बहती रहेंगी तब तक पर्वत रामायण मानव मन को पाप व दुष्कर्मों से वर्जित करती रहेंगी।

राजाजी लिखते हैं कि उन्होंने महाभारत व रामायण लिखकर लोगों की सेवा करने का प्रयत्न किया। जो कष्ट कुन्ती, कौशल्या, द्रौपदी व सीता जी ने सहे, उन्हें याद करके हम अपने भविष्य की रचना उच्च स्तर पर कर सकेंगे। रामायण इतिहास या जीवन गाथा नहीं, यह हिन्दू मिथिहास का अटूट अंग है।

राजाजी लिखते हैं कि उन्होंने महाभारत व रामायण लिखकर लोगों की सेवा करने का प्रयत्न किया। जो कष्ट कुन्ती, कौशल्या, द्रौपदी व सीता जी ने सहे, उन्हें याद करके हम अपने भविष्य की रचना उच्च स्तर पर कर सकेंगे। रामायण इतिहास या जीवन गाथा नहीं, यह हिन्दू मिथिहास का अटूट अंग है। एक जनश्रुति के अनुसार ऋषि नारद जी से राम के बारे में जानकर उन्होंने श्रीराम को अपने महाकाव्य का नायक बनाया। कहा जाता है कि ऋषि भारद्वाज, ऋषि कागभुशुण्डि और ऋषि अशिष्ट महर्षि वाल्मीकि जी के तीन सदस्य थे जो उनसे परमात्मा, मन, आत्मा, सृष्टि सृजन और इनसे परस्पर सम्बन्धित बहुत जटिल प्रश्न पूछते थे। महर्षि वाल्मीकि जी ने इन प्रश्नों के जो उत्तर दिये वे इस ग्रंथ में अंकित हैं। एक मत के अनुसार इस ग्रंथ की शिक्षा ऋषि वशिष्ठ जी ने प्राप्त की जो आगे श्री रामचन्द्रजी को प्राप्त हुई। लव-कुश ने भी इस दर्शन (फिलासफी) की शिक्षा प्राप्त की।

महर्षि वाल्मीकि के समन्वयवादी एवं समाज सुधारक वचनों के अपनाने को आज पहले की अपेक्षा अधिक आवश्यकता है। उनके संदेश आज भी प्रासंगिक हैं। युग-युगान्तरों के पश्चात् ऐसे महापुरूष जन्म लेते हैं। ■

प्रथमतः भारतीय अंततः भारतीय, सिर्फ़ और सिर्फ़ भारतीय

कुछ लोग जो कहते हैं कि हम पहले भारतीय हैं और उसके बाद हिंदू या मुस्लिम, यह मुझे पसंद नहीं है। मैं नहीं जानता कि भारतीय के रूप में हमारी निष्ठा हमारे धर्म, हमारी संस्कृति या भाषा से उत्पन्न हो। मैं चाहता हूं कि हम सभी लोग प्रथमतः भारतीय, अंततः भारतीय, सिर्फ़ और सिर्फ़ भारतीय हों।

-डॉ. बी.आर. अम्बेडकर

लोक प्रशासन, पुलिस एवं जन सहभागिता

■ कैलाशनाथ गुप्त

ब्रिटेनिका के अनुसार ऐसी गतिविधियां जिनमें सरकार की नीतियां तथा कार्यक्रम क्रियान्वयन सम्मिलित हैं, लोक प्रशासन कहलाती हैं। आधुनिक लोक प्रशासन में सम्मिलित हैं, सरकारी नीतियों के निर्धारण में कुछ जिम्मेदारी, परन्तु मुख्य रूप से हिस्सा है, योजना आयोजन, निर्देशन, समन्वय और सरकारी गतिविधियों का नियन्त्रण।

लोक प्रशासन एक रोजगार का क्षेत्र है जो सभी प्रकार के सरकार के लिए बराबर है, क्योंकि सभी राष्ट्रों को नीतियों के कार्यान्वयन सम्बन्धी मशीनरी की आवश्यकता होती है। राष्ट्रों के अन्दर लोक-प्रशासन को कार्य रूप में केन्द्र सरकार तथा स्थानीय सरकारों द्वारा लाया जाता है तथा प्रान्तीय और राज्य सरकारों द्वारा भी। विशेषकर उन लोगों द्वारा जिन्होंने राष्ट्रीय गतिविधियों में विशेषज्ञता हासिल की है।

लोक प्रशासन के सुधार हेतु जो अन्य ध्येय हैं, उनमें सम्मिलित हैं उनके अर्थव्यवस्था में सुधार एवं उत्तमता, उनके संगठन के प्रारूप में सुधार तथा योजना, साधनों का निर्धारण, प्रशासन का न्यायपालिका से तालमेल तथा जवाबदेही को विकसित करने हेतु बजट की वृद्धि जिससे यह उपरोक्त कार्यों हेतु प्रधान अस्त्र सिद्ध हो सके।

राष्ट्रीय-क्षेत्रीय अथवा स्थानीय सभी क्षेत्रों पर सार्वजनिक महत्त्व के विषयों के प्रबन्ध को लोक प्रशासन कहा जाता है। यह प्रशासन के वृहत क्षेत्र की एक शाखा है। मार्क्स के शब्दों में "प्रशासन चेतन उद्देश्य से की जाने वाली निश्चित क्रिया है। इसमें कार्यों को क्रमबद्ध रूप से व्यवस्थित किया जाता है और यह वांछित लक्ष्यों को सम्भव बना देने के उद्देश्य से साधनों का नपा तुला प्रयोग है।"

लोक प्रशासन एक रोजगार का क्षेत्र है जो सभी प्रकार के सरकार के लिए बराबर है, क्योंकि सभी राष्ट्रों को नीतियों के कार्यान्वयन सम्बन्धी मशीनरी की आवश्यकता होती है। राष्ट्रों के अन्दर लोक-प्रशासन को कार्य रूप में केन्द्र सरकार तथा स्थानीय सरकारों द्वारा लाया जाता है, तथा प्रान्तीय और राज्य सरकारों द्वारा भी। विशेषकर उन लोगों द्वारा जिन्होंने राष्ट्रीय गतिविधियों में विशेषज्ञता हासिल की है।

भारत में जन-सहभागिता:

समाज की राजनीतिक प्रक्रियाओं में जनसाधारण के योगदान की आवश्यकता और अपेक्षा के बारे में विभिन्न लेखकों और अरस्तू तथा मार्क्स जैसे दर्शनशास्त्रियों द्वारा बार-बार व्यक्त किए गए मतों में बहुत भिन्नता है। लोकतांत्रिक राजनीतिक, संपूर्ण सिद्धान्त और प्रक्रिया, सरकारी और लोक कार्यालयों में सत्ता और उत्तरदायित्व पर काबू करने और भागीदारी होने में जनता के योगदान की व्यावहारिकता पर निर्भर करता है। जनता के योगदान संकल्पना सर्वप्रथम यूनान में चालू हुई जहां सरकार के रूप में लोकतंत्र का उदय हुआ। प्राचीन यूनान के प्रत्यक्ष लोकतंत्रों में सभी महत्वपूर्ण निर्णय लोकप्रिय विधान सभाओं द्वारा लिए जाते थे और नागरिक राज्यों के मामलों में सक्रिय भाग लेते हैं। तब से राज्य की बदलती हुई प्रक्रिया और भूमिका से लोकतंत्र का अर्थ और तत्व व्यापक एवं संकुचित दोनों होता गया है राजनीतिक तत्व सामाजिक और आर्थिक तत्व शामिल होने से अब लोकतंत्र का लक्ष्यार्थ व्यापक हो गया है।

अब स्वतंत्रता और समानता लोकतांत्रिक राज्य के दो लक्ष्य हैं। आधुनिक राज्यों के आकार और उनकी जनसंख्या में वृद्धि से प्रत्यक्ष लोकतंत्र का कार्य संचालन असंभव हो गया है। अब आधुनिक लोकतंत्र प्रतिनिधित्व संस्थाओं के माध्यम से जनता के अप्रत्यक्ष योगदान के सिद्धांत पर कार्य करता है।

वर्तमान समय में "प्रशासनिक राज्य" के अनेक लेखकों ने लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं

के प्रतिमानों के प्रति प्रशासनिक राज्य की अनुक्रियाशीलता की समस्या पर चिंता व्यक्त की है। अधिकारीतंत्र और स्वेच्छाचारी दुरूपयोग से व्यक्तिगत अधिकार और स्वतंत्रता सुरक्षित रखने के लिए लोगों का अधिक सतर्क रहना और राजनीति में भाग लेना आवश्यक हो गया है। आधुनिक राज्यों को निर्णय लेने में प्रयुक्त कसौटी के लिए लोक कार्यों में अपनी भागीदारी प्रकट करता है।

योगदान प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष, औपचारिक या अनौपचारिक हो सकता है। इसकी प्रकृति राजनीतिक, सामाजिक या प्रशासनिक हो सकती है। लोक प्रशासन में गतिशील और संस्थागत नागरिक के योगदान की प्रभावकारिता निम्नलिखित तीन कारकों पर निर्भर करती है।

(क) इसमें भाग लेने वाला निकाय या अधिकरण इसे कितनी गंभीरता से लेता है।

(ख) क्या लोक प्रशासन उस निकाय से परामर्श लेता है; और

(ग) क्या लोक प्रशासन उस निकाय को कुछ कार्यक्रम सौंपता है।

प्रशासन में कई प्रकार से नागरिक की भागीदारी हो सकती है। यह उन सभी कार्यकलापों का उल्लेख करता है जिनसे प्रशासन-प्रक्रियाओं में नागरिकों के शामिल होने की बात का पता चलता है, अर्थात् नीति-निर्धारण और कार्यक्रम आयोजन तथा विशेष लक्ष्य वर्गों के विकास के लिए बनाई गई नीतियों और कार्यक्रमों के कार्यान्वयन तथा मूल्यांकन में योगदान। विकासशील समाज में लोगों के योगदान की परम्परागत परिभाषा (निर्णय लेने की प्रक्रिया में नागरिक का सक्रिय रूप में शामिल होना) नागरिक के पास समय, पहल करने और संसाधनों की कमी के कारण अक्सर विसंगती हो जाती है। इस प्रकार, नागरिक अपने लाभ के लिए बनाए गए सरकारी कार्यक्रमों में आवश्यक उत्साह या सहयोग प्रदान करने में असमर्थ रहता है। इसलिए, इन देशों में विभिन्न कार्यकलापों में भाग लेने के लिए सरकार को नागरिकों से अनुरोध करना चाहिए। राज्य न केवल सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन और आधुनिकीकरण के लिए प्रयत्न करने में मुख्य भूमिका निभाता है, परन्तु संस्थागत भागीदारी को भी बढ़ावा देने के प्रयत्न करता है।

नागरिकों की सहभागिता में कुछ पूर्व शर्तों की अपेक्षा की जाती है। संभवतः इनमें सबसे महत्वपूर्ण हैं शिक्षित राजनीतिक नेता, कर्त्तव्यनिष्ठ सरकारी कर्मचारी और जानकार तथा सहयोग करने वाली आम जनता। कर्मचारियों और नागरिकों दोनों को ही परस्पर समस्याओं और कठिनाइयों का ज्ञान होना सफल सहभागिता का महत्वपूर्ण योगदान है।

जनसहभागिता की समस्याएं :

भारत जैस विकासशील देशों के प्रशासन में लोगों की सहभागिता की मात्रा और सीमा औपनिवेशिक युग के दौरान प्रशासन की मूल प्रकृति तथा कार्य-संचालन की विशेषताओं से बहुत अधिक प्रभावित रही है। उस समय कानून और व्यवस्था बनाए रखना और राजस्व इकट्ठा करना ही प्रशासन के मुख्य कार्य थे। तब प्रशासनिक व्यवस्था और उसके कार्य, काफी सीमा तक, जनता के लिए उनके क्षेत्रों के विकास के लिए वास्तविक शक्ति और उत्तरदायित्व हस्तांतरण हेतु प्रारंभ किया गया था। योजना-निर्धारण और कार्यान्वयन प्रक्रियाओं में नागरिकों की सहभागिता की आवश्यकता का उल्लेख भारत की पंचवर्षीय योजनाओं में बार-बार किया गया है, जिसका आवर्ती विषय विकास योजनाओं में स्वयं जनता की सक्रिय प्रेरणा, सहभागिता और उन्हें शामिल करके भारतीय जनता का सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक विकास करना है।

नागरिक सहभागिता के साधन :

आमतौर पर भारत में निम्न साक्षर स्तर, ज्ञान में कमी, दरिद्रता, निष्क्रियता और लोगों की आम उदासीनता, नीतिनिर्धारण प्रक्रिया में जनता को सहभागिता में बाधा पहुंचाते हैं। नागरिक, ज्यादा से ज्यादा, केवल अप्रत्यक्ष रूप से (क) गांव, ब्लाक तथा अन्य स्तरों पर पंचायत निकायों में राज्य विधान सभाओं और संसद में अपने प्रतिनिधियों का चुनाव करके, (ख) राजनीतिक दलों, गुटों, युवा मंचों, विश्वविद्यालयों, स्वैच्छिक संस्थाओं, प्रेस योजना निकायों और सरकारी मशीनरी द्वारा आयोजित संगोष्ठियों, अध्ययनों और विचार-विमर्शो में शिक्षित नागरिकों के भाग लेने और (ग) राजनीति दलों और अन्य संस्थाओं के माध्यम से नीति-निर्धारकों और योजनाकारों के सक्षम लोगों की आवश्यकताओं और गांवों में सामंजस्य स्थापित करके दिशा निर्देश और नीति उद्देश्य तैयार करने में अपना योगदान दे सकते हैं।

नागरिक विचारों को राजनीतिक दलों, दबाव गुटों, प्रेस और स्वैच्छिक संस्थाओं जैसे विभिन्न अभिकरणों द्वारा भी व्यक्त किया गया है। संस्थागत सहभागिता से केन्द्रीय और राज्य विधानमंडलों अथवा पंचायती राज निकायों आदि प्रशासकीय अभिकरणों के द्वारा सरकार की नीति तैयार करने में नागरिकों की सहभागिता का बोध होता है।

पुलिस का उदाहरण :

लोक सम्पर्क के इन साधनों का प्रयोग करते समय इस बात का ध्यान रखा जाना चाहिए कि इसके क्रिया-कलाप निर्मल, सच्चे, स्पष्ट, प्रामाणिक और उत्तरदायी हों। निष्कर्ष के रूप में हम इस तरह कह सकते हैं कि लोक-सम्पर्क प्रशासन का दर्पण है। इसमें प्रशासन की आकांक्षाएं और उपलब्धियां एक साथ दृष्टिगोचर होती हैं। वास्तव में पुलिस संगठन के लिए भी लोक-सम्पर्क आवश्यक है। सबसे पहले जनता को पुलिस के कार्य, उसके तरीके, नियमों से भली भांति परिचित कराया जाना आवश्यक है ताकि एक पुलिस कर्मचारी जो भी ड्यूटी करता है और एक साधारण

व्यक्ति अपने स्वयं के हित में जो कार्य करता है इन दोनों में कोई अन्तर नहीं है। एक दृष्टि से "प्रत्येक नागरिक एक पुलिस मैन है"। वह अपने जान-माल की स्वयं रखवाली करता है। इतना ही नहीं वह अपने परिवार के व्यक्तियों की और कभी-कभी अपने पड़ोसी तथा अपरिचितों के जान-माल की भी रखवाली करना अपना कर्त्तव्य समझता है। मोटे तौर पर पुलिस मैन भी यही कार्य करता है। आम जनता के जान-माल की रखवाली करना उसका मूल कर्त्तव्य है। जब किसी व्यक्ति की कोई चीज गुम हो जाती है तब वह उसकी तलाश करता है और सोचता है कि कौन ले गया होगा। अर्थात् वह पुलिस मैन के समान थोड़े रूप में मामले की विवेचना करता है। परिवार का वरिष्ठ सदस्य यह व्यवस्था करता है कि घर के किस कमरे में कौन बच्चा रहेगा। कौन बच्चा किस टेबिल का उपयोग करेगा, कौन बच्चा रहेगा, कौन बच्चा पैदल स्कूल जाएगा और कौन बस में जाएगा। इसी प्रकार पुलिस मैन भी सड़क पर ट्रैफिक की व्यवस्था करता है कि पैदल चलने वाले को फुट पाथ पर चलना चाहिए, वाहनों को अपनी बाईं ओर से चलाना चाहिए आदि। इस प्रकार आम जनता को यह बताने की आवश्यकता है कि पुलिस के कर्त्तव्य लगभग वैसे ही हैं जैसे कि एक आम आदमी स्वयं अपने लिए करता है।

पुलिस की कार्यप्रणाली और कानूनी पक्ष से भी आम जनता को परिचित कराया जाना आवश्यक है। पुलिस द्वारा अभिरक्षा में रखे गये व्यक्तियों से पूछताछ में जो गोपनीयता बरती जाती है, उससे भी आम लोगों में यह भ्रम हो जाता है कि पुलिस पूछताछ के समय अमानवीय व्यवहार करती है यह बात बहुधा सही नहीं होती अपराधों की विवेचना में पुलिस द्वारा अपनाये जाने वाले वैज्ञानिक तरीकों के सम्बन्ध में जनता में लगातार प्रचार करने से इस प्रकार की भ्रान्ति का निवारण बहुत सीमा तक हो सकेगा।

जनसहयोग प्राप्त करने में कठिनाइयां :

पुलिस की उपस्थिति एक सामाजिक आवश्यकता है। एक तरह से कहा जाए कि पुलिस के बिना समाज का अस्तित्व ही खतरे में पड़ जाएगा तो इसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। जब पुलिस और समाज का इतनी निटकता का सम्बन्ध है, तो फिर उसे जनसहयोग प्राप्त करने में कठिनाइयां क्यों आती हैं? क्या दोनों एक दूसरे को सन्देह की दृष्टि से देखते हैं?

अक्सर समाचार पत्रों, सेमिनारों व अन्य आयोजनों तथा गोष्ठियों के माध्यम से पुलिस को जनसहयोग या पुलिस जनता से सम्बन्ध विषय पर चर्चा की जाती है। तब एक ही बात सामने आती है कि पुलिस जनसहयोग नहीं ले पाती या पुलिस को जनता का सहयोग नहीं मिलता। इस कारण अमुक वारदात हो गई या पर्याप्त सहयोग के अभाव में अपराधी पकड़ा नहीं जा सका या माल बरामद नहीं हो सका।

ऐसे कौन-कौन से कारण हैं, जिनसे हमें जनता का पर्याप्त सहयोग प्राप्त करने में कठिनाइयां होती हैं। प्रश्न के उत्तर में जो सबसे बड़ी बात सामने आती है, वह है जनता के प्रति पुलिस का व्यवहार। अक्सर पुलिस अधिकारी व कर्मचारी अपनी भाषा से तथा व्यवहार से जनता के मन में घृणा उत्पन्न कर देते हैं। पुलिस अधिकारियों को चाहिए कि वे सर्वप्रथम सौहार्दपूर्ण व्यवहार जनता के साथ करें, सदैव मदद की भावना रखें।

दूसरा कारण है, विलम्ब व पक्षपात। अक्सर ये शिकायत रहती है कि पुलिस कार्यवाही विलम्ब से की जाती है तथा उसमें भी पक्षपात किया जाता है। पुलिस प्रभावशाली व पैसे वाले लोगों के प्रति नरम तथा आम जनता के प्रति सख्त रवैया अपनाती है, जिससे जनता का सहयोग प्राप्त करने में काफी कठिनाई होती है। इसी तरह साक्षी व मुखबिर जो पुलिस के मददगार हैं, उनके प्रति भी पुलिस का व्यवहार खराब रहता है। अनावश्यक रूप से साक्षियों को थाने में बैठाकर रखा जाना, व बार-बार गवाही हेतु बुलाना, उनकी सुख-सुविधाओं का ख्याल न करना भी जनसहयोग करने में बाधा पहुंचाते हैं।

राजनैतिक हस्तक्षेप व व्यक्तिगत स्वार्थों के कारण भी अक्सर पुलिस को जनता के असन्तोष का सामना करना पड़ता है। कभी-कभी तो अनपेक्षित हस्तक्षेप के कारण पुलिस को पूर्णतः गलत कार्य भी करने पड़ते हैं जिससे जनता के मन में इस संगठन के प्रति नफरत सी होने लगती है। इसके अलावा कुछ पुलिस अधिकारी अपने व्यक्तिगत स्वार्थों में आकर जनता के साथ अन्याय कर बैठते हैं, आवश्यकता ऐसी है जिससे जनसहयोग बढ़ाया जा सके।

इसके अलावा पुलिस अधिकारी का व्यक्तिगत चरित्र व योग्यता भी जनसहयोग प्राप्त करने में मुख्य भूमिका निभाते हैं। योग्य व अच्छे-पुलिस अधिकारी हैं उन्हें आज भी पर्याप्त जनसहयोग मिलता है। अक्सर पुलिस अधिकारियों के खराब आचरण भी जनसहयोग प्राप्त करने में कठिनाई उत्पन्न कर देते हैं।

पुलिस को सत्यनिष्ठा के बारे में जनता के मन में विश्वास उत्पन्न करके गलत फहमियों को दूर करना होगा। पुलिस जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त लोगों के जीवन को व्यवस्थित एवं नियमित कराने में सहयोगी है। जीवन का कोई ऐसा सामाजिक, भौतिक, सांस्कृतिक नैतिक पहलू नहीं है जो कि पुलिस की देखभाल में न आता हो। पुलिस केवल लोगों के जीवन की रक्षा ही नहीं कर रही है अपितु भूखों मरने वालों की, बीमारी से पीड़ित व्यक्तियों की, अनाथ बालकों की, भटके हुए राहगीरों की सेवा भी कर रही है। इसलिए जनता के बीच पुलिस का शिष्ट व्यवहार जनता व पुलिस के बीच सहयोग के मार्ग में आने वाली कठिनाइयों को अवश्य दूर करने में सहायक होगा। ये बातें सहभागिता हेतु सभी विभागों में समान रूप से लागू होती है

श्री जवाहरलाल नेहरू जी ने भी एक बार कहा था कि पुलिस वास्तव में सही और गलत के चौराहे पर खड़ा एक ऐसा

व्यक्ति है जिसकी जिम्मेदारी सही की रक्षा करना और गलत को पकड़ना है। अपनी सर्वश्रेष्ठ भूमिका में वह अपने आप में ही एक संरक्षक, एक मार्गदर्शक, एक सामाजिक कार्यकर्ता तथा व्यवस्था और प्राधिकरण का प्रतीक है। किसी भी क्षेत्र के कार्यकर्ताओं के लिए इतनी अधिक आशाओं को उचित रूप में पूरा कर पाना आसान कार्य नहीं है। इसमें कोई संदेह नहीं कि कानून एवं व्यवस्था बनाए रखने में पुलिस तब तक फलीभूत नहीं हो सकती, जब तक उन्हें नागरिकों का पूर्ण सहयोग प्राप्त न हो।

यह परम आवश्यक है कि पुलिस को लोगों का मित्र होना चाहिए। किसी भी बल की सफलता मुख्य रूप से उसकी सामान्य जनता का विश्वास जीतने और स्वैच्छिक सहयोग प्राप्त करने की क्षमता पर निर्भर करता है। यह कार्य केवल पुलिस का ही नहीं है। इस कार्य में समाज के नागरिकों को भी पूर्ण सहयोग देना चाहिए और इस लक्ष्य को प्राप्त करने का प्रयास करना चाहिए।

नागरिकों के सहयोग के बिना कोई भी पुलिस कर्मचारी अपना काम समुचित रूप से नहीं कर सकता है। नागरिकों को भी यह महसूस करना चाहिए कि पुलिस उनकी भलाई के लिए कार्य करती है। इसलिए पुलिस के साथ सहयोग करना और उनका रवैया मित्रता पूर्ण होना चाहिए।

आज पुलिस की जिम्मेदारियां और भार पहले की अपेक्षा बहुत बढ़ गया है। मुख्य प्रश्न यह है कि पुलिस बल का लोगों में पुनः विश्वास कैसे पैदा हो, क्योंकि जब तक लोगों में यह विश्वास पैदा नहीं होता तब तक पुलिस बल पूरा प्रभावकारी नहीं होगा। तभी नागरिकों का सहयोग पुलिस को प्राप्त होगा और वे कानून एवं व्यवस्था बनाए रखने में पुलिस की मदद कर सकेंगे।

अब भी हमारी पुलिस के मुख्य कार्य अपराध निवारण और कानून तथा व्यवस्था बनाए रखना है। पुलिस को अधिक से अधिक सामाजिक अनुशासन को बढ़ाने का प्रतीक समझा जाता है। इसके लिए मनोविज्ञान के निष्कर्षों के गहन अध्ययन पुलिस के तरीकों को आधुनिक बनाने वैज्ञानिक साधनों के अधिकतम उपयोग और कानून एवं व्यवस्था बनाए रखने में नागरिकों का अधिकतर सहयोग प्राप्त करने की आवश्यकता है। एक सफल पुलिस वही मानी जाती है जो कानून एवं व्यवस्था बनाए रखने में नागरिकों का अधिकाधिक सहयोग लेने में सफल सिद्ध हो और इस ओर वे निरंतर प्रयास करती रहे। यदि देश में स्थायी शांति और व्यवस्था न हो तो इसका कोई लाभ नहीं कि सेना को कहा जाये कि वह जाकर सीमाओं की रक्षा करे। यह प्रमुख कार्य पुलिस का है; परन्तु नागरिकों का समर्थन व सहयोग प्राप्त न हो तो पुलिस की ताकत भी अधूरी रह जाती है। अतः कानून एवं व्यवस्था बनाए रखने में नागरिकों की अहम भूमिका है। कानून एवं व्यवस्था की नयी-नयी चुनौतियों का सामना करने हेतु नागरिकों का सहयोग प्राप्त होना परमावश्यक है।

कानून एवं व्यवस्था सबसे पहले कानून के प्रति आदर की भावना पर निर्भर करता है और उसके बाद पुलिस जैसे कानून को लागू करने वाले बलों की शक्ति पर। शक्ति का तात्पर्य हथियारों की शक्ति से नहीं वरन् सरकार एवं नागरिकों के समर्थन मिलने पर निर्भर करता है। नागरिकों का यह परम कर्त्तव्य है कि गलत फहमियों, गलत प्रचार एवं अफवाहों से दूर रहे और वास्तविकता का सामना करते हुए कानून एवं व्यवस्था बनाए रखने में पुलिस की मदद करें।

प्राधिकरण का प्रयोग केवल दंड या बंदूक के बल पर ही नहीं अपितु लोगों के प्रति बुनियादी समझ बूझ रखकर और उनके प्रति सहानुभूति दिखाकर तथा नागरिकों का सहयोग प्राप्त कर ही किया जा सकता है। कहने का तात्पर्य यह नहीं कि अपराधी के प्रति सहानुभूति दिखाकर उसे बच निकलने दिया जाये। परन्तु आम जनता को यह महसूस करना चाहिए कि पुलिस उनकी मदद के लिए है। आपसी मेल जोल एवं नागरिकों के सहयोग से ही हम लोगों को धीरे-धीरे हिंसा से दूर रख सकते हैं और लोकतांत्रिक तरीकों से समस्याओं का हल करना सीख सकते हैं।

कानून एवं व्यवस्था बनाए रखने, सांप्रदायिक दंगों, नक्सली उपद्रव एवं आतंकवाद/उग्रवाद आदि नियंत्रण हेतु नागरिकों का कई प्रकार से सहयोग हो सकता है। जैसे कि सूचना प्राप्त करने के लिए स्थानीय लोगों की मदद की आवश्यकता पड़ती है। नागरिकों के लिए यह भी जरूरी है कि असामाजिक तत्वों द्वारा शरण मांगे जाने पर उनकी सहायता नहीं की जाए और बाद में साक्ष्य देने की जरूरत पड़ने पर, नागरिक इसके लिए पर्याप्त रूप से निर्भीक हों और तत्पर रहें। इसके लिए यह भी जरूरी है कि पुलिस निष्पक्ष हो और नागरिकों का दिल जीतते हुए कानून एवं व्यवस्था बनाए रखने में उनका सहयोग निरंतर प्राप्त करती रहे। पुलिस को समयोचित कार्यवाही करने में सफल होने हेतु नागरिकों का सहायोग प्राप्त होना बहुत

कानून एवं व्यवस्था सबसे पहले कानून के प्रति आदर की भावना पर निर्भर करता है और उसके बाद पुलिस जैसे कानून को लागू करने वाले बलों की शक्ति पर। शक्ति का तात्पर्य हथियारों की शक्ति से नहीं वरन् सरकार एवं नागरिकों के समर्थन मिलने पर निर्भर करता है।

आवश्यक है। पुलिस लोगों के बीच लोगों के मित्र की तरह रहे और स्थिति को स्पष्ट करने तथा उनका सहयोग मांगने के लिए उनसे कानून के किसी अंग के रूप में नहीं, बल्कि साक्षी की तरह बातचीत करे जैसे कि कोई मित्र करता है।

अतः इस चुनौतीपूर्ण समस्या के समाधान हेतु नागरिकों का दिल जीतना एवं ऐसा वातावरण बनाया जाना अति आवश्यक है जिससे नागरिक पुलिस को स्वयं सहयोग प्रदान करें और कानून-व्यवस्था बनाए रखने में भूमिका निभा सकें।

यह प्रयास होना चाहिए कि कानून और व्यवस्था बनाए रखने के संबंध में जब पुलिस कार्यवाही करे तो लगातार इस बात पर ध्यान रखे कि जनसमूह/नागरिकों को अपने साथ कैसे रखा जा सकता है।

पुलिस प्रशिक्षण में सुधार लाकर संपूर्ण पाठ्यक्रम को इस ओर इंगित करना भी आवश्यक है जिसे पुलिस नागरिकों का दिल जीतते हुए कानून एवं व्यवस्था बनाए रखने में उनका निरंतर सहयोग प्राप्त करने में सफल होती रहे और आये दिन जो मानवाधिकारों के उल्लंघन के मामले प्रकाश में आते रहते हैं, उनसे वे दूर रहे जिससे कि नागरिक अधिक से अधिक उन्हें सहयोग प्रदान करते रहें।

पुलिस को अपने अनुसंधान को वैज्ञानिक सहायता से (साइंटिफिक ऐड) तत्परता से पूरा करना आवश्यक है इसमें केन्द्रीय न्यायिक वैद्यक विज्ञान प्रयोगशाला अथवा राज्य प्रयोगशालाओं की भी मदद लेते हैं, जिनमें नागरिक अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

दिल्ली पुलिस ने तो अपना नारा ही "आपके लिए आपके साथ, सदैव" रखा है। यह सिद्धांत दोनों अर्थात् पुलिस एवं नागरिक के लिए आवश्यक है। नागरिकों को अवैतनिक विशेष पुलिस ऑफिसर (एच.एस.पी.ओ.) के रूप में लिया जा रहा है जिसका मुख्य ध्येय यह है कि नागरिकों का सहयोग प्राप्त किया जा सके और अपराध नियंत्रण एवं आतंकवाद दूर करने में पुलिस और नागरिकों के बीच की खाई भी दूर हो सके।

इसके अतिरिक्त पड़ोसी देख-रेख योजना (नेबहरहुड वॉच सिस्टम) का भी सफलतापूर्वक कई वर्ष से दिल्ली पुलिस द्वारा संचालन किया जा रहा है, जिससे नागरिकों का स्वैच्छिक सहयोग अधिक से अधिक प्राप्त हो सके। यह दोनों ही योजनाएं सभ्य और सुशिक्षित नागरिकों के स्वैच्छिक सहयोग से काफी सफल सिद्ध हुई हैं और इसके आश्चर्यजनक नतीजे समाज के सामने आदर्श रूप में प्रस्तुत हुए हैं। यह सर्वविदित है कि पुलिस अकेले अपराध का नियंत्रण नहीं कर सकती तथा अपराधियों तक नहीं पहुंच पाती, जब तक नागरिकों का उसे पूर्ण सहयोग प्राप्त न हों और नागरिकों से उन्हें पूरी सूचनाएं प्राप्त न हों। अपराधों का सामना करने में या समाप्त करने की जिम्मेदारी अकेले पुलिस की ही नहीं, बल्कि समुदाय के प्रत्येक नागरिक की है। अकेले पुलिस यह कार्य-बिना नागरिकों के सहयोग के नहीं कर सकती है।

पुलिस योजना (पुलिसिंग) में भी नागरिकों की अहम भूमिका है। इससे सामाजिक नियंत्रण प्राप्त होता है और यह दोनों के हित में है कि वह एक दूसरे की मदद करें और समाज को अपराधमुक्त बनाएं। इससे जीवन की गुणवत्ता में विकास होगा और असामाजिक तत्वों पर नियंत्रण होगा।

यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि यह पुलिस पूरे समाज के हित में है कि दोनों का निरंतर सहयोग बना रहे और शांति एवं व्यवस्था निरंतर कायम रहे, जिससे देश सुदृढ़ हो सके।

जो बातें पुलिस व नागरिक यह सहभागिता पर लागू होती है, वे ही लोक प्रशासन और जनसहभागिता पर भी समान रूप से लागू होती हैं।

निष्कर्ष के रूप में:

विकास-प्रक्रिया में लोगों की सहभागिता का अभिप्राय विकास-प्रशासन में निर्णय लेने की विभिन्न परिस्थितियों में आम जनता और लक्षित जनता के सक्रिय सहयोग और इन कार्यों में उनके शामिल होने से है। इसमें, सभी स्तरों, विशेषतः निचले स्तर पर विकास कार्यक्रमों की योजना, कार्यान्वयन और मूल्यांकन में उनकी सक्रिय दिलचस्पी, उत्साह और सहयोग की अपेक्षा की जाती है। जनता की सहभागिता जन आंदोलन के रूप में होनी चाहिए क्योंकि यह केवल विकास का साधन ही नहीं परन्तु यह अपने आप में एक विकास लक्ष्य है। जनता की सहभागिता विकास की वास्तविक प्रक्रिया का, विशेषतः भारत जैसे विकासशील लोकतंत्र में पूरक है। इसमें राजनीतिक और प्रशासनिक, दोनों प्रकार के विकेन्द्रीकरण की अपेक्षा की जाती है। पंचायती राज की संस्थाएं, निचले स्तर के लोकतंत्र और लोकतांत्रिक विकास की संस्थाओं के रूप में स्थापित हो गई हैं। हाल ही में इस प्रणाली ने अपने पुराने बंधन अपनी प्रकृति और उत्साह खो दिया है। इस समय पंचायती राज निकायों को उनमें निश्चित अन्तराल के बाद चुनाव कराने, स्थानीय सरकारी संस्थाओं को पर्याप्त संसाधन और शक्ति उपलब्ध कराने, इन निकायों में अनिवार्य आरक्षण द्वारा महिलाओं, अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों जैसे कमजोर वर्गों के सदस्यों को पर्याप्त प्रतिनिधित्व देने, गुजरात की तरह नामांकन और सहयोजन करने, भूमि-सुधार के अधिक प्रभावी कार्यान्वयन करने, बढ़ते हुए उत्पादन और आधुनिकीकरण, विज्ञान और प्रौद्योगिकी आदि के द्वारा उत्पादकता में वृद्धि सहित समाज में रचनात्मक परिवर्तन करके दरिद्रता समाप्त करने, रोजगार के अवसर पैदा करने, हमारे बच्चों और युवकों को उद्देश्य पूर्ण शिक्षा देने और राष्ट्रीय एकता में बढ़ावा देने हेतु फिर से प्रचलन में लाने और इनकी कायाकल्प करने की आवश्यकता है। ■

प्रेमचन्द के उपन्यासों में दलित विमर्श

■नीलम

‘दलित’ का शाब्दिक अर्थ है कुचला हुआ, दबाया हुआ और जिसके अधिकारों का हनन किया गया। अतः दलित वर्ग का सामाजिक सन्दर्भों में अर्थ होगा, वह जाति, समुदाय जो अन्यायपूर्ण सवर्णो या उच्च जातियों द्वारा शोषण-दमन किया हो, रौंदा गया हो। दलित शब्द का व्यापक रूप में पीड़ित के अर्थ में आता है, पर दलित शब्द का प्रयोग हिन्दू समाज-व्यवस्था के अन्तर्गत परम्परागत रूप में शूद्र माने जाने वाले वर्णो के लिए रूढ़ हो गया है। दलित वर्ग में वे सभी जातियाँ सम्मिलित हैं जो जातिगत सोपान क्रम में निम्नतम स्तर पर है और जिन्हें सदियों से दबा कर रखा गया है।

प्रेमचन्द साहित्य और जीवन को घनिष्ठ रूप से सम्बद्ध मानते हैं। उनके मतानुसार- “साहित्य की सर्वोतम परिभाषा- जीवन की आलोचना है।”[1]

जो गरीबी, अपमान और लाचारी दलितों के हिस्सों में आई है, उसकी अभिव्यक्ति ही दलित साहित्य है। गांव से बाहर रहने वाला यह दलित समाज जागृत हो गया है। उसे एक साथ दो मोर्चो पर लड़ना है। एक तो बस्ती से बाहर की दुनिया से और दूसरे बस्ती में फैले घोर अज्ञान, दरिद्रता और रूढ़ियों की दासता से। प्रेमचन्द ने अपने उपन्यास साहित्य में दलितों की तत्कालीन दशाओं के चित्रण के साथ-साथ उनमें चेतना का भी संचार किया है। अंग्रेज सरकार द्वारा उन्हें ‘रायसाहब’ का सम्मान दिया जाने का प्रस्ताव आया जिसे उन्होंने यह कहकर ठुकरा दिया “जनता की रायसाहबी मंजूर है, सरकार की नहीं” और इस तरह उन्होंने स्वाभिमान से अपना मस्तक ऊंचा रखा। समाज कल्याण की अपनी भावना को व्यक्त करते हुए स्वयं प्रेमचन्द लिखते हैं- “हम तो समाज का झण्डा लेकर चलने वाले सिपाही हैं और सादी जिन्दगी के साथ ऊंची निगाहें हमारे जीवन का लक्ष्य है।”[2]

प्रेमचन्द प्रथम भारतीय लेखक हैं जो अवर्णो और सवर्णो के बीच रोटी-बेटी का संबंध स्थापित करते हैं। उनके लेखन में हमारे गांव के किसानों-मजदूरों और दलितों की उत्पीड़न भरी दुर्दशा का चित्रण है। उन्होंने सामन्तवादी व्यवस्था और वर्ण-व्यवस्था की अनीतियों का यथार्थ चित्रण किया है। उन्होंने जो भी लिखा जमीन से जुड़कर लिखा, जो मात्रा और गुणवत्ता दोनों में विपुल और बेजोड़ है। ‘प्रेमाश्रम’ में कुछ स्थानों पर दलित संघर्ष का चित्रण मिलता है। सामन्ती शासन में बेगार के रूप में हाकिमों के दौरे पर उनके घोड़ों के लिए घास छीलना चमारों का काम था। एक चपरासी इस काम के लिए भगत को पकड़ लेता है तो वह कहता है “घास चमार छीलते हैं। यह हमारा काम नहीं।”[3]

सरकारी बेगार में पारिश्रमिक मांगना एक प्रकार से अपराध था। तहसीलदार के दौरे पर चमारों द्वारा जब घास छीलने की मजदूरी मांगी जाती है तो तहसीलदार नाजिर को आदेश देता है “आप मेरा मुंह क्या

देख रहे हैं? चपरासियों से कहिए, इन चमारों की अच्छी खबर ले। यही इनकी मजदूरी है। नाजिर के कहने पर चपरासियों ने बेगारों को घेरना शुरू किया। कान्स्टेबलों ने भी बन्दूकों के कुन्दे चलाने शुरू किए।''[4]

दलित वर्ग से किस तरह बेगार प्रथा के रूप में काम लिया जाता था और मजदूरी मांगने पर उनके साथ अमानवीय व्यवहार किया जाता था। यह शासन की क्रूरतम एवं अन्यायपरक व्यवस्था थी जिसका चित्रण प्रेमचन्द ने अपने इस उपन्यास में किया है।

'रंगभूमि' उपन्यास में सूरदास जो जाति से चमार है इसका नायक है। इस उपन्यास में दलित वर्ग के एक व्यक्ति को पहली बार नायकत्व प्राप्त हुआ है। पूंजीपति जॉन सेवक सूरदास की खाली भूमि को खरीद कर उस पर सिगरेट का कारखाना स्थापित करना चाहता है। सूरदास सार्वजनिक उपयोग में आने वाली इस भूमि को किसी भी मूल्य पर बेचना नहीं चाहता। उसकी रक्षा के लिए संघर्ष करता है लेकिन वह सफल नहीं होता है लेकिन सूरदास बड़े इत्मीनान से कहता है, ''भले ही हम हार गए पर हमने धांधली तो नहीं की''। अपने कथानायक से ऐसा कहलवाकर प्रेमचन्द आम आदमी की ईमानदारी को प्रतिष्ठित करते हैं कि दलित वर्ग अपने अधिकारों के प्रति जागृत हो चुका है। भलें ही उसके लिए उसे शहीद होना पड़ा हो।

'कर्मभूमि' की गणना प्रेमचन्द के महत्वपूर्ण उपन्यासों में की जाती है। इसकी मूलकथा स्वतन्त्रता प्राप्ति हेतु चलाए जा रहे सत्याग्रह आन्दोलन पर आधारित है। अछूतों और किसानों की समस्याएं उसी का अंग बन कर आती है। इस उपन्यास में प्रेमचन्द ने हमारे समाज की आर्थिक विषमता का सच्चा चित्र खींचा है। उन्होंने एक और नगर के पूंजीपति और गांव के जमींदार वर्ग के ऐश्वर्यपूर्ण जीवन को अंकित किया है तो दूसरी ओर नगर के अछूत एवं गांव के किसान के जीवन के खण्डहरों को दिखाया है।

अछूतोद्धार से संबंधित जो विचार प्रेमचन्द ने प्रस्तुत किए हैं। वे गांधीवादी दृष्टिकोण से प्रभावित हैं। अछूतों के मन्दिर प्रवेश से सम्बन्धित जो संघर्ष इस उपन्यास में दिखाया गया है वह धार्मिक मनोवृत्ति की संकुचितता का सूचक है। सुधारवाद का झूठा नारा लगाने वाले सामान्य लोग भी इतने सहिष्णु नहीं होते कि निम्न वर्गो को अपने बराबर स्थान दे सकें। इसलिए अछूत वर्ग की समस्या एक रोग की भांति फैलती जाती थी। इसके अतिरिक्त अछूत समस्या का एक महत्वपूर्ण पक्ष आर्थिक भी है। ब्राह्मणों ने अछूतों को यह विश्वास दिलाया था कि उनके जीवन में यातनाओं का ईश्वरीय विधान है। धन के स्वामियों ने इन अछूतों को शोषण का केन्द्र बना कर अपने हाथ-पैरों को हिलाने की कसम खा ली थी। बेचारे घोर परिश्रम करके भी अपने पेट भरने में लाचार थे। धर्म के आधार पर जो वर्गीकरण था उसमें अछूत वर्ग अथवा शूद्र ही ऐसे थे जिनकी अवस्था दयनीय थी।''[5]

सुधारवाद का झूठा नारा लगाने वाले सामान्य लोग भी इतने सहिष्णु नहीं होते कि निम्न वर्गो को अपने बराबर स्थान दे सकें। इसलिए अछूत वर्ग की समस्या एक रोग की भांति फैलती जाती थी। इसके अतिरिक्त अछूत समस्या का एक महत्वपूर्ण पक्ष आर्थिक भी है। ब्राह्मणों ने अछूतों को यह विश्वास दिलाया था कि उनके जीवन में यातनाओं का ईश्वरीय विधान है। धन के स्वामियों ने इन अछूतों को शोषण का केन्द्र बना कर अपने हाथ-पैरों को हिलाने की कसम खा ली थी। बेचारे घोर परिश्रम करके भी अपने पेट भरने में लाचार थे। धर्म के आधार पर जो वर्गीकरण था उसमें अछूत वर्ग अथवा शूद्र ही ऐसे थे जिनकी अवस्था दयनीय थी।''

इस उपन्यास का प्रमुख पात्र अमरकान्त घर छोड़ कर अछूतों के गांव में जा बसता है, जहां इस बीच उसकी पत्नी सुखदा अछूतों के मन्दिर प्रवेश के लिए सत्याग्रह में भाग लेती है। अछूत और दलित वर्ग की जितनी भयावह स्थिति गांव में है। वैसी ही नगरों में भी है। उनके रहने के स्थान साक्षात नरक है। इस उपन्यास में दलित वर्ग की इस समस्या को उठाया गया है। प्रथम बार सभी दलित जातियां संगठित होकर आन्दोलन करती हैं। सब अपनी पंचायत करके संघर्ष की तैयारी करते हैं। सभी मिलकर हड़ताल का फैसला करते हैं। हड़ताल से पूर्व अफसरों से प्रार्थना करते हैं लेकिन सारे प्रयत्न विफल हो जाते हैं। अछूतों को अपने स्वत्व का ज्ञान हो जाता है, अब वे अन्याय और उपेक्षा को सहने का तैयार नहीं हैं। अछूतों की इस संगठित शक्ति के सामने

अधिकारियों को झुकना पड़ता है। उनकी मांगें मान ली जाती हैं।

अछूत वर्ग में चेतना की आग भड़कती जा रही है। अब संघर्ष सामाजिक और धार्मिक समस्याओं तक सीमित नहीं है; बल्कि आर्थिक प्रश्नों तक पहुंच गया है। ईश्वर और धर्म के नाम पर किये जा रहे प्रत्येक अन्याय, शोषण और अनीति का शोषित लोग सक्रिय होकर विरोध कर रहे हैं। चमारों का चौधरी गूदड़ पूर्वजन्मों के फलों के संस्कारवादी सिद्धान्तों का विरोध करता है- ''ये सब मन को समझाने की बातें हैं बेटा, जिससे गरीबों को अपनी दशा पर सन्तोष रहे और अमीरों के राग-रंग में किसी तरह की बाधा न पड़े। लोग समझते हैं कि भगवान ने हमको गरीब बना दिया। आदमी का क्या दोष? पर यह कोई न्याय नहीं है कि हमारे बाल-बच्चे तक काम में लगे रहे और भोजन न मिले और एक-एक अफसर को दस-दस हजार की तलब मिले।''[6]

इस उपन्यास में प्रेमचन्द ने ग्राम और शहर दोनों ही मोर्चो पर दलित वर्ग को अपने अधिकारों के लिए संघर्ष करते हुए चित्रित किया है। इस उपन्यास में वे यथार्थवादी ढंग से सोचते हैं। आर्थिक समानता पाए बिना धार्मिक समानता बेमानी है। अतः उन्होंने दलितों को मन्दिर में प्रवेश कराने के साथ-साथ जमीदारों से अपने अधिकारों से लड़ते हुए भी दिखाया है।

'गोदान' प्रेमचन्द की प्रौढ़तम कृति है। इस उपन्यास में उनका आदर्श के प्रति मोहभंग स्पष्ट दिखाई देता है। इस उपन्यास में दलित वर्ग का चित्रण मातादीन सिलिया की कथा के माध्यम से हुआ है। प्रेमचन्द ने यह स्पष्ट किया है कि असवर्ण नारी की स्थिति अत्यन्त दयनीय है। जो सवर्ण दिन के उजाले में उनकी छाया मात्र से बच कर चलते हैं। वे ही रात के अंधेरे में उन्हें अपनी अंकशायिनी बनाने में जरा भी हिचकिचाते नहीं हैं। असवर्ण नारी सवर्ण हिन्दू की दृष्टि में केवल भोग लिप्सा का साधन मात्र है। मातादीन झिगुरी सिंह द्वारा व्यंग्य किए जाने पर कहता है--- ''और फिर मेरा तो सिलिया से जितना उबार होता है, ब्राह्मण कन्या से क्या होगा? वह तो बहुरिया बनी बैठी रहेगी। बहुत होगा रोटियां पका देगी। यहां सिलिया अकेले तीन आदमियों का काम करती है और मैं उसे सिवाय रोटियों के और देता क्या हूं?[7] ''और दातादीन का बेटा मातादीन उपन्यासकार के शब्दों में सिलिया का तन और मन लेकर भी बदले में कुछ न देना चाहता था। सिलिया अब उसकी निगाह में काम करने की मशीन थी और कुछ नहीं। उसकी ममता को वह बड़े कौशल से नचाता था।''[8] सिलिया के साथ निरन्तर शारीरिक सम्बन्ध रखने पर उसके ब्राह्मणत्व पर कोई आंच नहीं आती किन्तु उसी औरत से शादी करने पर ब्राह्मणत्व नष्ट होने का खतरा हैं। उच्च वर्ण की इस दोहरी नैतिकता पर प्रेमचन्द व्यंग्य करते है और अब दलितों में संघर्ष चेतना उत्पन्न हो चुकी है। इसलिए सिलिया का पिता हरखू तथा उसकी बिरादरी वाले चमार सिलिया के इस अपमान का बदला यह कह कर लेते है---''हम या तो आज मातादीन को चमार बना देंगे या उनका और अपना रक्त एक कर देंगे। ---तुम हमें ब्राह्मण नहीं बना सकते तो मुदा हम तुम्हें चमार बना सकते है।''[9]

चमारों ने जो कुछ कहा वह सब करके भी दिखाया। मातादीन के मुंह में पकड़ कर हड्डी ठूंस दी और अपने ढंग से उसे चमार बना दिया।

हिन्दू धर्म में अछूत को ब्राह्मण बनने का अधिकार नहीं लेकिन किसी सवर्ण हिन्दू के कुकर्म करने पर तथा धर्म भ्रष्ट करने पर उसे पुनः जाति विशेष में प्रवेश पाने की व्यवस्था है। अतः कई सौ रूपये खर्च करने के बाद अन्त में काशी के पंडितों ने फिर से उसे ब्राह्मण बना दिया। मातादीन को शुद्ध गोबर और गौमूत्र खाना-पीना पड़ा। गोबर से उसका मन पवित्र हो गया। मूत्र से उसकी आत्मा में अशुचिता के कीटाणु मर गए।

मातादीन का मन इस शुद्धि से सन्तुष्ट नहीं होता। उसके भीतर रूढ़िवादी समाज, धर्म तथा मानव धर्म में संघर्ष होता है और मानव धर्म की विजय होती है। मातादीन रूढ़िवादी धर्म त्याग कर सिलिया को स्वीकारता है।

''मैं ब्राह्मण नहीं चमार ही रहना चाहता हूं। जो अपना धर्म पाले वहीं ब्राह्मण है, जो धर्म से मुंह मोड़े वही चमार है।''[10]

अछूतों को समाज में प्रतिष्ठित करने के लिए आवश्यक था कि उनमें विवाह संबंध भी हो। प्रेमचन्द ने गोदान में ब्राह्मणों और अछूतों में रोटी-बेटी का संबंध स्थापित करके दिखाया है। जाति-पाति से जुड़े धार्मिक अन्धविश्वास एवं पौरोहित्य की व्यर्थता सिद्ध की है। इस दृष्टि से दलित संघर्ष चेतना को प्रस्तुत करता हुआ 'गोदान' एक विशिष्ट एवं स्मरणीय उपन्यास है।

निष्कर्षतः कह सकते है कि प्रेमचन्द ने अपने उपन्यासों में दलित संघर्ष को बखूबी प्रस्तुत किया है। अब दलित समाज अपने अधिकारों के प्रति जागरूक हो चुका हैं और इन अधिकारों को प्राप्त करने के लिए वह संघर्ष करता है। अगर दलित एकजुट होकर अपने अधिकारों को प्राप्त करने के लिए संघर्ष करते हैं तो वे अवश्य ही अपने इरादों में सफल होंगे और रूढ़िवादी समाज पर अपनी विजय प्राप्त करेंगे। इसी का चित्रण प्रेमचन्द ने अपने उपन्यासों में किया है। ■

सन्दर्भ-सूची

1. साहित्य का उद्देश्य, प्रेमचन्द, -पृ. 2
2. साहित्य का उद्देश्य, प्रेमचन्द, -पृ. 11
3. प्रेमाश्रम, उपन्यास, मुंशी प्रेमचन्द, पृ. 274
4. प्रेमाश्रम, उपन्यास, मुंशी प्रेमचन्द, पृ. 280
5. प्रेमचन्द और कर्मभूमि, श्री राम वशिष्ठ, पृ. 78
6. कर्मभूमि, (उपन्यास) प्रेमचन्द, पृ. 157
7. गोदान, (उपन्यास) प्रेमचन्द, पृ. 250-251
8. गोदान, (उपन्यास) प्रेमचन्द, पृ. 253
9. गोदान, (उपन्यास) प्रेमचन्द, पृ. 357
10. गोदान, (उपन्यास) प्रेमचन्द, पृ. 357

अछूत

■ मुल्क राज आनन्द

बक्खा झपटकर दालान के बीच में पहुंचा, अपने पीछे-पीछे वह अपनी बहन को घसीटता ले गया और उसकी आंखें भीड़ में पुजारी के आकार को टटोलने लगी। पुजारी कहीं दिखाई नहीं पड़ा और आगे लहराती हुई भीड़ भी भंगी के लड़के की विशाल भयानक आकृति को मन्दिर की ओर दृढ़ कदम रखते देख तितर-बितर हो गई। भीड़ को छितराता देख बक्खा का निश्चित कदम रूक गया। उसकी मुट्ठी भिंची हुई थी। उसकी आंखों से लाल भयावने शोले निकल रहे थे। उसने दांतों को किटकिटाते हुए ललकारा, "दिखाऊं तुम्हें, उस बाह्मण कुत्ते ने क्या किया है!"

उसे प्रतीत हुआ कि वह उन सब की हत्या कर डालेगा। वह अत्यन्त क्रूर तथा निर्दय दीख रहा था- निर्जीव-सा रक्तहीन और क्रोध तथा क्षोभ के मारे नीलवर्ण। उसी क्षण उसे ध्यान आया कि ऐसी ही घटना उसने पहले सुनी थी। एक युवक ग्रामीण ने ईंधन एकत्रित करने खेतों में से लौटती हुई अपने मित्र की बहन को छेड़ा था। लड़की का भाई तभी कुल्हाड़ी लेकर खेत में पहुंचा और आततायी के टुकड़े-टुकड़े कर डाले 'इतना अपमान' उसने सोचा 'कि वह एक छोटी मासूम लड़की पर आक्रमण करे! और उसके ऊपर यह ढोंग! यह अधम, एक ब्राह्मण, झूठ बोलता है और मेरे ऊपर अपने को अपवित्र करने का दोषारोपण करता है, जबकि-हे भगवान! कही उसने मेरी बहन के साथ बलात्कार तो नहीं किया!' उसके मन में सन्देह उठा कि कहीं ऐसा ही हुआ हो। उसे बिच्छू का डंग-सा लगा और सोहिनी की तरफ मुड़कर वह चिल्लाया, "बता मुझे, उसने तेरे साथ कुछ किया तो नहीं!"

सोहिनी रो रही थी। उसने निषेध-सूचक सिर हिलाया। वह बोल नहीं सकी।

बक्खा को कुछ सांत्वना मिली। पर, नहीं। उसकी कुचेष्टा!" उसने सोचा, 'उस अधम ने अवश्य ही मेरी बहन से अश्लील छेड़छाड़ की होगी। न जाने उसने क्या किया? हे भगवान! मैं उस अधम की हत्या कर डालूंगा! उस नीच की बोटी-बोटी उड़ा दूंगा!' वास्तव में क्या हुआ था, यह जानने की सुकता उसे झिझोड़ रही थी।, तथापि वह अपनी बहन से दुबारा पूछने मैं झिझकता था कि कहीं वह रोने लगे। पर बढ़ते हुए सन्देहों तथा आशंकाओं के सामने वह अपने को नहीं रोक सका।

"बता मुझे, सोहिनी," वह अपनी बहन की ओर भयानकता से मुड़कर बोला, "वह दुष्ट कहां तक बढ़ा था?

वह सुबकती रही, बोली नहीं।

"बता मुझे! बता मुझे! मैं उसकी हत्या कर डालूंगा, यदि........" वह चीखा।

"उ.....स.....ने मुझे छेड़ा ही था," वह अन्त में बोली, "और जब मैं काम करने को झुकी हुई थी तो उसने आकर मेरे वक्ष पकड़ लिये।"

"सूअर का बच्चा!" बक्खा गुर्राया, मैं अभी जाकर उसकी हत्या करता हूं।" और वह अंधाधुन्ध दालान की ओर लपका।

"नहीं-नहीं! लौट आओ! आओ चलें!" उसके ओवरकोट का पल्ला पकड़कर खींचते हुए कठिनता से उसे रोककर सोहिनी ने कहा।

वह क्षण-भर को मन्दिर को घूरता खड़ा रहा। द्वार के बाहर एक भी प्राणी नहीं दीख रहा था। सब ओर सन्नाटा था। उसके शरीर के रक्तकोष फिर शिथिल पड़ने लगे। सामने द्वार से लेकर शिखर तक की विभूतिमय चित्रकारी उसे घूर रही थी। वह विशाल, डरावनी तथा आक्रामक प्रतीत होती थी। वह फिर आक्रान्त हो गया। भय की भावना फिर उसमें रेंग गई। उसे प्रतीत हुआ कि देवता उसे घूर रहे हैं। वे उसे सजीव से दिखने लगे, यद्यपि उन-जैसी आकृति उसने कभी संसार में नही देखी थी। अपने पांच सिर और दस हाथों सहित से दीवारों के रिक्त स्थानों से कटाक्षपात करते हुए बड़े कठोर प्रतीत होते थे और उनके नेत्र स्थिर थे। उसकी आंखों के आगे धुंध छा गया। उसकी भिंची मुट्ठियां खुल गई और भुजाएं पार्श्व में लटकने लगी। दुर्बलता ने उसे आ घेरा और वह सहारा टटोलने लगा। बड़ी कठिनता से उसने अपने

को संभाला और सोहिनी को साथ ले बाहरी फाटक की ओर लौट गया।

अपने साथ-साथ चलती बहन को देखकर उसकी आत्मा को बड़ी पीड़ा हुई। वह कितनी दुर्बल और कितनी सुन्दर थी! बक्खा उसके लावण्य से अनभिज्ञ नहीं था। उसका कृश, हल्का भूरा शरीर एक मृदुता, उष्णता तथा दमक से ओत-प्रोत था। उसमें से ऐसी रश्मियां विकीर्ण होती थीं जो उसके आभूषणों-उसके कान की बालियों और हाथ की चूड़ियों में एक मारात्मक प्रभाव उत्पन्न कर देती थीं। और वह बहुत शान्त थी, बहुत मार्मिक लजीली, तथा एक विचित्र मार्दव और प्रकाश से पूर्ण। वह सोच ही नहीं सकता था कि कोई भी पुरूष, चाहे वह उसका धार्मिक विधि से ब्याहा पति ही हो, उसके साथ बर्बरता का व्यवहार करे। उसने उसकी ओर देखा और यों ही उसके भविष्य-जीवन का छायाचित्र उसके नेत्रों के सामने नाचने लगा। उसका पति होगा, एक पुरूष जो उस पर पूर्ण स्वत्व प्राप्त किये होगा। कल्पना-निर्मित उसके भावी पति के चित्र से उसे घृणा होने लगी। उसे दिखाई दिया कि वह अजनबी उसके संकुल वक्ष पकड़े हुए है और वह लजाती हुई उसे मना नहीं करती, अनुमति देती है। उस आदमी के उसे छूने के विचार ने ही उसे बौखला दिया। उसे भान हुआ कि उसका कुछ खो जाएगा। क्या खो जाएगा यह सोचने का उसे साहस नहीं हुआ। न ही यह सोचने का साहस हुआ कि वह स्वयं ही.. ...। 'मैं तो उसका भाई हूं' अपने पथभ्रष्ट विचारों को समेटते हुए उसने अपने मन से कहा। पर उसके दम्भरहित मस्तिष्क को भावी पति के प्रेम तथा अपने बहन के प्रति भावों में कुछ अन्तर प्रतीत नहीं हुआ। उसने सारी ही चित्र को मिटा दिया। फिर उसी नाटे पुजारी की आकृति उसके मस्तिष्क में आ खड़ी हुई। उसका रक्त फिर उबलने लगा। बदला लेने की भीषण अभिलाषा ने उसे आ दबाया-बदले का तात्पर्य था उस दुष्ट को दण्ड देना, उसे भर-भर पीटना, आवश्यकता पड़े तो मार भी डालना। हजारों वर्ष की गुलामी ने उसे विनत बना दिया था तथापि खुले आकाश के नीचे जो उष्ण भाव उसके मन में उठे उनके कारण जीव-रक्षा का मान कम हो गया। उसके पुरखा कृषक-मूल के थे, अपना पेशा बदलने के कारण ही वे सामाजिक मानदण्ड में नीचे गिर गए थे। उसकी नसों में उन्हीं कृषक पुरखों का रक्त परिभ्रमित हो रहा था, जो गुलाम होते हुए भी अपना ही जीवन बिताने में स्वतंत्र थे। वह अपने मन से चिल्लाकर बोला, 'उसे कुछ खरी-खोटी तो सुनानी ही चाहिए थी।'

बदला लेने की भीषण अभिलाषा ने उसे आ दबाया-बदले का तात्पर्य था उस दुष्ट को दण्ड देना, उसे भर-भर पीटना, आवश्यकता पड़े तो मार भी डालना। हजारों वर्ष की गुलामी ने उसे विनत बना दिया था तथापि खुले आकाश के नीचे जो उष्ण भाव उसके मन में उठे उनके कारण जीव-रक्षा का मान कम हो गया। उसके पुरखा कृषक-मूल के थे, अपना पेशा बदलने के कारण ही वे सामाजिक मानदण्ड में नीचे गिर गए थे।

जब वह कुछ कहने, कहीं जाने या कुछ करने का दृढ निश्चय करता था तो उसकी सुन्दर आकृति एक आक्रामक चीते की भांति सुन्दर हो जाती थी और वह मानव जाति का एक उत्कृष्ट नमूना प्रतीत होता था। फिर भी एक असारता उसके चेहरे पर अंकित थी। उसकी प्रतियोगिता में अपनी दुर्बलता को ढ़कने के लिए उससे ऊंचे कहे जाने वालों ने जो प्रतिबन्ध गढ़ लिए थे उनको वह नहीं लांघ सकता था। किसी से भी, विशेषतया एक नीच जाति के पुरूष से, आक्रमण किये जाने के विरूद्ध एक पुजारी के गिर्द जो जादू का वृत्त कसा हुआ है, उसे तोड़ डालना उसकी सामर्थ्य से बाहर था। इस कारण शक्ति की उस महानतम घड़ी में, उसके आन्तरिक दास्य भाव ने उसे आ दबाया और वह जहां-का-तहां आ गिरा-पीड़ा से अत्यन्त उन्मत्त, होठ काटता हुआ, अपने क्लेशों के चिन्तन में व्यग्र।

मन्दिर से बाहर निकलने पर भाई-बहन के सामने एक जन-संकुल बाजार था। बक्खा ने उसे उड़ती दृष्टि से देखा। उसके नेत्रों के सामने जो विचित्रताओं का मेला बिखरा पड़ा था उस पर वह अपना ध्यान केन्द्रित नहीं कर सका। वह न कुछ देखना चाहता था, न कुछ सुनना, और न कुछ बोलना। 'मैंने उस ढोंगी को मार क्यों नहीं डाला! वह मृदुता से चिल्लाया। 'मैं सोहिनी के लिए अपने को कुरबान कर सकता था। सब उसके बारे में जान जाएंगे। हाय बेचारी बहन! वह अब दुनियां को क्या मुंह दिखाएगी? पर उसने उस नराधम की हत्या करने से मुझे रोका क्यों? वह हमारे घर में लड़की होकर क्यों जन्मी, हमें कलंक लगाने के लिए? इतनी सुन्दर! इतनी सुन्दर और ऐसी भाग्यहीन! वह संसार की कुरूप से कुरूप स्त्री क्यों न हुई! फिर उसे कोई क्यों छेड़ता!' बहन के कुरूप होने की कल्पना भी उसे सह्य न हुई। उसकी सुन्दरता पर उसे जो गर्व था, उसे ठेस लगी। तब उसने इतनी ही इच्छा प्रकट की कि 'हे भगवान् उसे पैदा ही क्यों किया! उसे जन्म ही क्यों दिया!' तभी उसने

सोहिनी को झुककर अपने आंचल से आंसू पोंछते देखा! मृदुत्ता तथा नम्रता के एक आकस्मिक उद्वेग में उसने उसकी बांह कसकर पकड़ ली और उसे खींचता ले चला- अपने आन्तरिक द्वन्द्वों में छटपटाता हुआ, निराशा से कांपता हुआ।

दो-चार कदम चलकर वह कुछ स्वस्थ हुआ। उसका सांस अधिक सम गति से आने-जाने लगा। उसकी स्थूल कच्ची हड्डियों से बनी काया, जो उसके उत्तप्त भावों से आक्रान्त हो एक कुंचनशील उत्साही आकार में तन गई थी, अब शिथिल पड़ गई। बाजार के लोगों से स्वाभाविक भय की भावना से वह अपने-आपे में आ गया, क्योंकि वह जानता था कि वे सब आने-जाने वालों की क्रियाओं को ताकते रहते हैं और कोई बेढंगापन या विचित्रता देखते हैं तो अशिष्ट तथा कटु बन जाते हैं। अब उसने आज की आपबीती को उसी आत्म-समर्पण के भाव से मगन किया, जिसे उसने लम्बी शताब्दियों से असंख्य बहिष्कृत पुरखों से उत्तराधिकार में प्राप्त किया था, जो स्थिर था पर लहर की तरह बहता रहता था और प्रत्येक पीढ़ी के बाल्यकाल में जाति-आदर्श के अनुशासन से परिपक्व कर दिया जाता था।

"सोहिनी, तू घर जा!" उसने अपनी बहन से कहा, जो उसके पीछे-पीछे चल रही थी, लज्जित तथा विष्णु, अपनी कीर्ति पर कलंक लगाये, जिसके कारण बड़ा उत्पात खड़ा होने की उसे आशंका थी। "हां, तू घर जा", उसने फिर कहा, "मैं रोटी लेने जाता हूं। यह झाड़ू-टोकरी अपने साथ लेती जा!"

सोहिनी ने बिना भाई की ओर देखे 'हां' -सूचक सिर हिलाया, उसके हाथ झाड़ू टोकरी के लिये, और मुंह पर घूंघट काढ़ नगर के फाटक की ओर चल दी।

एक दृष्टि अपनी बहन पर ढाल बक्खा भी ईश्वर के मकान से धीमे-धीमे रवाना हुआ। 'बचना ही, भंगी आ रहा है अपनी यह चेतावनी उसे अचानक याद आयी जब वह बाझनी सांड़ की तरह एक दुकान से दूसरी दुकान को नंगे पैर भागते एक सौदागर से भिड़ते-भिड़ते बचा। लोहियों से संकुल बाजार को वह बेसुध-सा पार करता चला गया; वहां की विभिन्न तथा मिश्रित, न देसी न विलायती, वस्त्रों से अच्छादित्त भीड़ की सांस तोड़ भगदड़ को उसने साधारण ही मान लिया। अब वह उस गली के सामने खड़ा था जो फल वाले तथा वृद्ध गन्धी की दुकानों के बीच जंभाई सी खुलती थी। उसकी आन्तरिक शून्यता के नीचे अपने भावों के गहरे पारम्परिक विरोधों से उत्पन्न असमंजस दबा पड़ा था। किन्तु प्रत्यक्ष में वह शान्त तथा स्थिर था। अब तक मूर्च्छा की सी अवस्था में बढ़ते आने के कारण उसने तनिक ठिठककर सोचा कि वह कहां है। 'इस गली के घरों में से रोटी मांग लाऊं', अपने मन से यों कह वह गली में घुसा।

अब उसने आज की आपबीती को उसी आत्म-समर्पण के भाव से मगन किया, जिसे उसने लम्बी शताब्दियों से असंख्य बहिष्कृत पुरखों से उत्तराधिकार में प्राप्त किया था, जो स्थिर था पर लहर की तरह बहता रहता था और प्रत्येक पीढ़ी के बाल्यकाल में जाति-आदर्श के अनुशासन से परिपक्व कर दिया जाता था।

एक दुबला, चींचड़ी-भरा, रोग-ग्रस्त, आवारा कुत्ता एक ओर मल-विसर्जन कर रहा था। दूसरा, हड्डियों का ढांचा-मात्र, नाली को रोके पड़े कूड़े के ढेर पर सड़े भोजन को चाट रहा था। थोड़ा चलकर गली के बीचों-बीच एक गाय लेटी थी। इधर-उधर फैले पड़े कूड़े-कर्कट को तो बक्खा उदासीन भाव से देख रहा था, किन्तु जानवरों पर उसे क्रोध आया। वह कुत्तों के पास गया और ऐसा झपटकर कूदा कि वे अचकचाकर झांकते-चिल्लाते भागते नजर आए। पर गाय के फैलकर बेसुध लेटने में यों विघ्न डालना कठिन था। फिर उसे यह भी डर था कि जिन अमीर लोगों के फाटकों के सामने वह फैली पड़ी थी, वे उसे स्पष्ट न हो जाएं कि गौमाता को क्यों दुखी किया। उसने केवल गाय के दोनों सींग पकड़ लिये कि उसकी टांगों में न मार दे और अपना रास्ता लिया। छोटे पुराने ईंटों के खरंजे पर जगह-जगह बिखरी कूड़े की ढेरियों ने उसे ध्यान दिलाया कि आज सुबह उनकी बहन ने अपना काम लापरवाही से किया था। पर उसके अपमान की याद करके उसने उसे क्षमा कर दिया। इतना अपमान सहने पर कौन अपना काम सुघड़ता से कर सकता है! वह यह ध्यान में भी नहीं लाना चाहता था कि अपनी बहन को क्षम्य ठहराने का उसका तर्क भ्रमपूर्ण है क्योंकि मन्दिर के मकान को साफ करने जाने से तो पहले वह इस गली में आयी होगी। फिर छोटी, अंधेरी, बेढंगी दुकानों पर तांबे को ठोकते-पीटते ठठेरों का तुमुल रब उसके कानों में भर गया, और वह थोड़ी देर तक अधिक सुखपूर्वक चला, क्योंकि शब्द प्रिय था, दूर से तो सुखकर भी प्रतीत होता था, और अपनी बहन के फूहड़पन के विरूद्ध उठते उसके विकल्पों को उबाने से सहायक हुआ। पर आगे चौक से पहुंचते ही चारों तरफ की दुकानों से निकलता 'ठक, ठक, ठक' शब्द असह्य हो गया। वह भागकर दूसरी छोटी गली में घुस जाता, जहां उसे रोटी मांगनी थी, पर गली के लगभग बीचों-बीच चबूतरे पर बैठे एक भक्त हिन्दू

अपने नंगे, तेल से चिकने शरीर पर दबादब लोटे उंडे़ल रहे थे और बक्खा को उस पवित्र जल से सराबोर हो जाने की आशंका थी। जब भक्त सज्जन पूरी-की-पूरी बाल्टी सिर पर उंडेल चुके तो उन्होंने खाली बाल्टी को फिर कुएं में लटकाया और बक्खा झपटकर उस सीली, अंधेरी गली में घुस गया, जो इतनी संकुचित थी कि दो मोटे आदमी वहां आ जाते तो तोंद टकराकर ही एक दूसरे को लांघते। बक्खा यहां कुछ शान्त हुआ, क्योंकि इस तंग गली में ठंढक थी और ठठेरों की 'ठक-ठक' भी मन्द पड़ गई थी। पर उसके धैर्य की परीक्षा तो अभी होने को थी। वह अछूत था, सवर्णो की रसोइयां ऊपर की मंजिल में थीं, और जीने पर चढ़कर वह घरों को नापाक नहीं कर सकता था। उसे तो नीचे ही अपने आने की सूचना चिल्लाकर देनी पड़ती थी।

"भंगी के लिए रोटी, माताजी, भंगी के लिए रोटी!" पहले घर के द्वार पर खड़ा होकर वह चिल्लाया। उसका स्वर गली में आने वाले 'ठक, ठक, ठक' शब्द की प्रतिध्वनि में डूब गया।

"रोटी के लिए रोटी, भंगी आया है माताजी, रोटी के लिए भंगी.....!" वह अधिक जोर से चिल्लाया।

पर सब व्यर्थ!

वह गली में और आगे बढ़ा और ऐसे स्थान पर खड़े होकर जहां पास-पास ही चार घरों के दरवाजे थे, उसने फिर अपनी पुकार लगायी, "भंगी के लिए रोटी भांगी, भंगी के लिए रोटी!"

तथापि घरों के ऊपर किसी को कुछ सुनाई नहीं पड़ा। वह तीसरे पहर आता तो अच्छा था, क्योंकि उस समय सब गृहवधुएं नीचे उतर आती हैं और अपनी-अपनी बैठकों में या गली की नालियों के किनारे जमकर गप्पें लड़ाती हैं या चरखे कातती हैं। तभी उसे ध्यान आया कि गली में ही बैठकर औरतें एक दूसरी का पल्ला लेकर सांपा भी तो करती हैं और छाती पीटती हैं-वह कुछ शरमा गया।

"भंगी के लिए रोटी, माता जी!" वह फिर चिल्लाया।

कुछ उत्तर नहीं मिला। उसकी टांगे दर्द कर रही थी। उसकी हड्डियां एक विचित्र रूप से शिथिल पड़ गई थी। उसके मस्तिष्क ने काम करना बन्द कर दिया। हारा-थका वह गली में पड़े एक मकान के तख्त पर बैठ गया। उसे थकान भी थी और ग्लानि भी, ग्लानि से अधिक थकान, क्योंकि ग्लानि के कारण-आज प्रातः की घटनाओं को वह प्रायः भूल चुका था।

"भंगी के लिए रोटी, माताजी, भंगी के लिए रोटी!" पहले घर के द्वार पर खड़ा होकर वह चिल्लाया। उसका स्वर गली में आने वाले 'ठक, ठक, ठक' शब्द की प्रतिध्वनि में डूब गया।

"रोटी के लिए रोटी, भंगी आया है माताजी, रोटी के लिए भंगी.....!" वह अधिक जोर से चिल्लाया।

निद्रावेग ने उसकी हड्डी-हड्डी को आ दबाया। उसने जबरदस्ती आंखे खुली रखनी चाहीं। फिर उसने अपने थके अंगों के साथ इतनी रिआयत की कि एक दहलीज के लकड़ी के बड़े फाटक के सहारे कुछ झुक गया। वह जानता था कि उसका स्थान था ईटों के गीले खड़ंजे पर, उस नाली के किनारे, जिसमें सब घरों का मलमूत्र बहकर आता था, किन्तु थोड़ी देर को वह लापरवाह ही हो गया। अपनी टांगें सिकोड़कर वह एक कोने में सिमट गया और थकान का जो अन्धकार उसे आच्छन्न करता आ रहा था उसकी मांगों के सामने उसने आत्म-समर्पण कर दिया। कुछ ही देर में वह निद्रा के वशीभूत हो गया।

उसके थके शरीर के दुर्भाग्य से उसकी नींद आतुर और अधकचरी ही रही। उसके अचेतन मन की गहन गहराइयों में बाधाएं विलक्षण, असंगत कल्पनाओं तथा स्वप्नों का ताना-बाना बुनती रही। उसने देखा कि वह एक बैलगाड़ी में बैठा एक अत्यन्त विलक्षण नगर के भीड़ से ठसाठस बाजार में जा रहा है। सामने से एक बारात आयी-सजे-सजाए, हंसते-खेलते लोग, उनके आगे-आगे एक पालकी जो रंग-बिरंगे कपड़ों से सजी थी और जिसे चार आदमी कन्धों पर ले जा रहे थे, उससे भी आगे एक सिक्ख बैण्ड, उनकी अंग्रेजी फौज की-सी वर्दी, बिगुल, बांसुरी, बीन बाजा, भौंपू, ढोल आदि बजाते हुए, विधिवत् पंक्तिबद्ध नहीं, उनका बाजा भी छावनी में सुने बाजों की तरह स्वरतालयुक्त नहीं, वरन् बेताल का असंगत और शान्तिभंगकर आक्रन्दन। फिर वह एक रेलवे-स्टेशन के प्लेटफार्म पर था। उसके सामने एक रेल खड़ी थी जिसमें माल के चालीस बन्द डिब्बे थे और दोनों सिरों पर एक-एक इंजन जुड़ा था। कहीं उसे पंक्ति-की-पंक्ति खुलें डिब्बों की दिखाई पड़ी जिनमें से एक पर मोटे-मोटे पत्थर लदे थे, दूसरे पर बड़े-बड़े लक्कड़। इनमें से एक के ऊपर वह चढ़ बैठा, एक पोटली बगल में दाबे, हाथ में चित्रित चांदी की मूठ वाली छतरी लिये, सिर पर टोप डाटे, मुंह में अपने पिता के हुक्के को न दबाए। अचानक बन्द रेल के डिब्बे चल पड़े। लगभग उसी समय उसे सुनाई पड़ा चीत्कार, प्रलाप, क्रन्दन, आक्रोश तथा सर्वव्यापिनी उत्तेजना, मानो समीप के ही किसी अदृश्य कोने में कोई हत्या हो गई हो। भय तथा दया से आर्द्र वह डिब्बे के सिरे से झुकता प्रतीत हुआ। उसे ज्ञात

हुआ कि ये तो केवल नीली वर्दी पहने रेल के कुली एक डिब्बे को शैड में धकेल रहे हैं। इतने में ही वह एक छोटे-से गांव में जा पहुंचा, जहां की संकुचित गलियों में दलदल तथा चौबच्चे भरे पड़े हैं। गायें इधर-उधर घूम रही हैं और आमने-सामने से आते दो भारी लदे हुए छकड़े दल-दल में धंस जाते हैं। खुले बाजारों में अनाज की ढेरियों पर गौरैयाओं के झुण्ड-के-झुण्ड उतर आए हैं और दाने चुग रहे हैं। मांसाहारी कौवा आया और घायल बैल के गले में चोंच मारने लगा। तब उसने हलवाई की दुकान के सामने खड़ी छोटी लड़की को देखा। ज्योंही मुस्कराती लड़की मिठाई खरीद कर हाथ में ऊंची किये आगे बढ़ी, कौवे ने उसके हाथ पर झपट्टा मारा और बेचारी की मिठाई नाली के पास पड़ी कूड़े की ढेरी पर बिखेर दी। वह रोने लगी। एक सुन्दर, स्थूलकाय सुनार अंगीठी के पास बैठा गहने घड़ रहा था। उसने आंख ऊपर उठायी कुछ समझकर हंसा और एक जलता कोयला लड़की के ऊपर उठे हाथ पर रख दिया। लड़की प्रसन्न मुद्रा से एक छोटे घर में घुस गई, वह प्रसन्न थी कि अपनी माता के चूल्हे के लिए उष्णता का मूल लिये जा रही है। तब बक्खा ने अपने आपको एक विद्यालय के चौक में पाया। जहां पीले साफे बांधे लड़के शोर मचाकर पढ़ रहे थे और हाथ में बेंत लिये शिक्षक अपने शिष्यों की कड़ी निगरानी कर रहे थे। कक्षा का मॉनीटर अपने साथियों में से प्रत्येक को एक-एक पद्य देता जाता था और शेष लड़के उसके साथ उस पद्य की महारानी भरते थे। इस विलक्षण नगर की सड़कों की भूलभुलैया के पीछे एक नदी बहती थी। उसके किनारे एक महल खड़ा था जिसकी विशाल गुम्बददार छत से पत्थर की बन्दनवार लटक रही थी और पत्थर की चित्रकारी विशेष आकर्षक थी। बक्खा भौचक्का-सा आश्चर्यचकित उसे देखता रहा। वह अन्दर घुसा और देखा कि यह सब एक चट्टान के अन्दर से काट कर बनाया गया है। उसकी छत पर लाल, सुनहरी, काली, हरी चित्रकारी हो रही थी। मध्य भवन के चारों ओर समान दूरी पर स्थित चित्रित महान् स्तम्भों द्वारा बने बरामदे के परले छोर पर एक दुबले-पतले आदमी को घेरे बहुत-से आदमी खड़े थे। गुम्बद में से बहुत-से सैनिक निकल पड़े जो हंसते-खेलते, अठखेलियां करते, बोलते-नाचते उसे एक विशाल मैदान में ले गए- एक शमशान भूमि-जहां पहली संध्या की जली चिताएं अभी तक सुलग रही थीं, मानव-शरीर की जलती ढेरियों में से धुंए के उच्छ्वास ऊपर उठ रहे थे। चिताओं के चारों और अनेक साधु खड़े थे जो चिता की भस्म अपने बालों में मल रहे थे, चरस पी रहे थे और विनाशक ताण्डव नृत्य में मग्न थे। एक कोने से एक गोरा साहब यह सब देख मुस्करा रहा था। बक्खा ने साधुओं के बीच एक योगी को देखा, जिसकी आयु दस हजार वर्ष से अधिक थी और जो समाधि में मग्न सिर घुटाए नग्न बैठा था। इस योगी ने अपने योग-बल से साहब को काला कुत्ता बना दिया। बक्खा योगी को कुछ भेंट देना चाहता था किन्तु साधुओं ने उसे रोक दिया। बक्खा सोचने लगा कि यह कैसे जीवित रहता है! तभी एक वृक्ष पर से बन्दरों का झुण्ड कूद पड़ा और....

जिस स्त्री के द्वार पर बक्खा आराम कर रहा था उसने उच्च स्वर में कहा, "साधुजी, अभी भोजन ला रही हूं।" किन्तु अपने घर के आगे लकड़ी के तख्त पर गठरी-बने भंगी के शरीर को देखकर वह ठिठक गई।

'.......अलख, अलख' के शब्द ने उसे जगा दिया। ऊंचे-ऊंचे मकानों के ऊपर से पड़ते सूर्य के प्रखर ताप में सारा स्वप्न पिघल गया। बक्खा समझ गया कि दोपहर हो गई। इसी समय तो साधु और भिखारी भक्त लोगों के घरों से भिक्षा पाते हैं। जिसके अधिकारी वे भगवान् को आत्म-समर्पण करके ही जाते हैं। तुरन्त उसने अपने आपको संभाला, आंखें मलीं और सोचा कि अब तो उसे भी रोटी मिल जाएगी। वह जानता था कि गृहवधुएं भभूतिया साधुओं की बाट में बैठी होंगी, वे उन्हें भिक्षा दिये बिना भोजन न करेंगी। 'मुझे भी शीघ्र ही रोटी मिल जाएगी' उसने सोचा और बैठे-बैठे ही साधु की तरफ मुंह उठाकर देखा। साधु उसे घूर रहा था। बक्खा पूर्ववत् ऊंघ गया।

साधु ने अपने हाथ के कड़े बजाए और अपने विशिष्ट घोर शब्द में चिल्लाया, "बम बम भोले नाथ"। तुरन्त ही दो स्त्रियों ने अपने-अपने छज्जे से नीचे झांका।

जिस स्त्री के द्वार पर बक्खा आराम कर रहा था उसने उच्च स्वर में कहा, "साधुजी, अभी भोजन ला रही हूं।" किन्तु अपने घर के आगे लकड़ी के तख्त पर गठरी-बने भंगी के शरीर को देखकर वह ठिठक गई।

"हरामखोर" वह चिल्लायी, "तेरा बेड़ा गर्क हो! तेरा सत्यानाश हो। तूने मेरा घर अपवित्र कर दिया! चल! उठ यहां से! हरामजादे! रोटी लेने आया तो आवाज क्यों नहीं लगायी? यह तेरे बाप का घर है जो आकर लेट रहा है।?"

जिस आकस्मिकता के साथ स्त्री की साधु के प्रति दयालुता और उसके प्रति कर्कशता में बदली थी उसी आकस्मिकता से बक्खा उठ खड़ा हुआ। जो शिथिलता उसे गरम हवा की भांति आवृत किये थे उसे झटकते हुए आंखें मलता हुआ वह

क्षमा-याचना करने लगा।

"माताजी, मुझे क्षमा करो! मैं रोटी के लिए बहुत चिल्लाया किन्तु व्यस्तता के कारण आप मुझे नहीं सुन सकी। मैं थका होने के कारण बैठ गया।"

"मगर जलमुंहे, यदि बैठना ही था तो तू मेरे फाटक पर कैसे बैठा? तूने तो मेरा धर्म बिगाड़ दिया। वहां गली में बैठता। अब तो मुझे सारे घर में गंगाजल छिड़कना पड़ेगा। राम-राम! अनर्थ कर दिया हत्यारे! अब तो तुम भंगियों ने आसमान को सिर पर उठा रखा है। यह दुर्भाग्य मंगल के प्रातःकाल और मन्दिर में दर्शन करने के पश्चात्!......." गालियों की झड़ी लगी ही रहती पर साधु को खड़ा देख वह रूकी। बक्खा का साहस नहीं था कि स्त्री की ओर देखता, पर वह जान गया कि वह क्रोध के मारे आग बबूला हो रही है।

"जरा रूकना, साधूजी," उसने फिर कहा, "मैं अभी आपके लिए भोजन लाती हूं। मेरी तो रोटी चूल्हे में पड़ी थी, इस हरामजादे ने मुझे यहां रोककर मेरी रोटी भी जलवा दी।" यों कहती वह छज्जे पर अपने आक्रमण-स्थल से पीछे हट गई।

"जरा रूकना, साधूजी," उसने फिर कहा, "मैं अभी आपके लिए भोजन लाती हूं। मेरी तो रोटी चूल्हे में पड़ी थी, इस हरामजादे ने मुझे यहां रोककर मेरी रोटी भी जलवा दी।" यों कहती वह छज्जे पर अपने आक्रमण-स्थल से पीछे हट गई।

इसी बीच में दूसरी स्त्री, उतनी ही शान्त जितनी पहली उग्र थी, एक हाथ में मुट्ठी-भर चावल और दूसरे में एक चपाती लिये नीचे उतरी। चावल उसने साधुजी के कमण्डल में डाल दिए और रोटी बक्खा को देती हुई दयार्द स्वर में बोली, "मेरे लाल! लोगों के फाटक पर तुझे यों नहीं बैठना चाहिए!"

"जियो भाई, तुम्हारे बच्चे फूलें-फलें!" भिक्षा लेकर आशीर्वाद देता हुआ साधु बोला, "क्या तुम्हारे घर में दाल नहीं जो साधु की भिक्षा में दो?"

"हां साधुजी," उसने कहा, "कल, कल से तम्हें दाल भी मिलेगी। अब तो मैं खाना बनाने में व्यस्त हूं।" कहती-कहती वह लपककर ऊपर चली गई।

अब नापाक हुए घर की मालकिन नीचे आयी। उसका शरीर जितना छोटा था, जिह्वा उतनी ही लम्बी। उसने गिद्ध-जैसी आंखों से बक्खा को घूरा और शिकायत की, 'वाह! आज सुबह-ही-सुबह तूने भला काम किया, मेरा घर ही नापाक कर दिया! तब वह साधु की ओर मुड़ी और भाप-निकलती ढेर-सारी गरमागरम कढ़ी और कटोरा-भर चावल उसके काले काष्ठ-पात्र में उंड़ेल दिए। और बोली, "इसे स्वीकार करो महाराज! घर तो शुद्ध ही है। इसने उसे वास्तव में अपवित्र नहीं किया। क्या आप मेरे पुत्र के बुखार के लिए कोई उपचार नहीं बताएंगे?"

"भगवान तेरा और तेरे बच्चों का भला करें!" साधु बोला, "मैं कल प्रातः कुछ जड़ी-बूटी लाकर दूंगा।" यों अपने भक्तों की आत्माओं की देखभाल करने का शुल्क प्राप्त कर वह आगे बढ़ा।

"तू मरे!" स्त्री ने बक्खा को गाली दी। साधु की सेवा से वह तो इतना पुण्य कमा चुकी थी कि अब भंगी पर क्रूरता दरशाकर उसमें से अधिक नहीं खोएगी। "आज तूने या तेरी बहन ने किया क्या है जो तुझे रोटी मिले। सुबह उसने गली में झाड़ू नहीं लगायी और अब तूने मेरा घर नापाक कर दिया। चल, नाली साफ कर, तब तुझे यह रोटी मिलेगी। चल, मेरा घर नापाक किया है तो कुछ काम तो कर!"

बक्खा थोड़ी देर स्त्री की ओर देखता रहा, फिर उसकी गालियों से पराभूत हो छोटी झाड़ू उठा नाली साफ करने लगा। यह वह जानता ही था कि उसकी बहन छोटी झाड़ू उसी तख्त के नीचे छिपा जाती है जिस पर वह बैठा था।

"मां", घर के ऊपर से एक बच्चा चिल्लाया, "मैं टट्टी जाऊंगा।"

"नहीं, तू नहीं जा सकता" भंगी के काम का निरीक्षण करती मां चिल्लायी। "तू ऊपर नहीं जा सकता, वहां दिन-भर पड़ा सड़ेगा," वह बोली, "यहां आ जा, नीचे आ जा, जल्दी कर, नाली पर बैठ ले। भंगी अभी साफ कर देगा।"

"नहीं" जिद्दी बच्चा बोला। वह रास्ता चलती गली में बैठने में शरमा रहा था।

उसे पकड़कर लाने को मां ऊपर लपकी। बक्खा के लिए जो रोटी लाई थी उसे भी देना भूल गई। ऊपर जाकर उसने लड़के को तो भेज दिया पर रोटी भेजना फिर भूल गई। अब रोटी देने दुबारा नीचे आना तो असम्भव था। बक्खा अपने काम के बीच में ही था कि ऊपर से आवाज आयी, "अबे बक्खा, ले, यह आ रही तेरी रोटी!" और ऊपर से ही उसने रोटी फेंक दी।

बक्खा क्रिकेट का अच्छा खिलाड़ी तो था ही; उसने झट झाड़ू पटक बहुतेरा प्रयत्न किया कि रोटी का 'कैच' ले ले, पर कागज-सी पतली चपाती हवा में उड़ चली और पतंग की तरह गली के खरंजे पर जा पड़ी। उसने उसे चुपके से उठा लिया और दूसरी रोटी जो मिली थी उसके साथ झाड़न में बांध लिया। इतनी ग्लानि उठाने के बाद अब नाली साफ करना कैसे सम्भव था, विशेषतया जब कि छोटा लड़का उसके सामने बैठा मल-विसर्जन कर रहा था। झाड़ू एक ओर रख उसने अपनी राह ली

और धन्यवाद भी नहीं जताया।

“कैसे लाट साहब हो गए हैं ये आजकल!” अभिवादन न पाकर स्त्री बोली। “दिन-दिन ये ऊंचे उठते जा रहे हैं।”

“मां, मैं कर चुका” उसका बेटा चिल्लाया।

“बराबर में अचार वाले के यहां पानी डलवा ले। वहां कोई न हो तो धूल से साफ कर ले, मेरे लाल” उसने कहा और रसोई को वापस लौट गई।

बक्खा की आत्मा में प्रात:काल के अपमानों की सामूहिक ज्वाला पहले से ही धधक रही थी, इस नये अपमान ने उसमें घी का काम किया। कहां तो वह नींद से जगा था सुबह की दु:खद स्मृतियों को लगभग भुलाकर; कहां अब उसके सिर के पिछले भाग में पीड़ा हो रही थी। एक विलक्षण ताप उसकी रीढ़ की हड्डी में चढ़कर उसके रक्त को सुखा रहा था और उसकी आकृति को सिकोड़ रहा था। ‘आज मन्दिर में उत्पात न होता,’ उसने सोचा, ‘तो रोटी लेने सोहिनी आती। मैं यहां आया क्यों?’ वह मूर्छित-सा चला जा रहा था। काला और गन्दा, तथापि उस सौजन्य तथा गौरव से सम्पन्न जो विदेशी वस्त्रों के कारण उसे प्राप्त था, वह एक विलक्षण अग्नि से आविष्ट था। ‘मुझे खरंजे पर से रोटी नहीं उठानी चाहिए थी’ उसने विचार किया और आह भरी। उसका जी कुछ हल्का हुआ।

इसी बीच में उसके पेट में चूहे कूदने लगे। शहर से निकल वह घर की तरफ लपका तो उसके मुंह से झाग आ रहे थे। उसके अंग शिथिल पड़ गए। खुले में आते ही उसने अनुभव किया कि साफे के नीचे से उसके मुख पर पसीने चू रहे हैं। उसने सूर्य की ओर देखा। वह ठीक उसके सिर के ऊपर था। सूरज चढ़ने के बोध से बक्खा का मुख उतावला हो गया। और वस्तुओं के बोध की भांति उसे समय का बोध भी विलक्षण था। “बगल में केवल दो चपाती दबाकर मैं कैसे घर जा सकता हूं” उसने सोचा। ‘पिता अवश्य ही पूछेंगे कि उनके लिए क्या बढ़िया माल लाया हूं। यदि मेरे पास दो ही चपातियां हैं तो इसमें मेरा क्या दोष है? वह यह भी पूछेंगे कि सोहिनी रोटी लेने क्यों नहीं गई। तब मुझे सारी कहानी बतानी पड़ेगी और वह कुपित होंगे।’ उसे याद आया कि बचपन में जब उसने एक दिन घर आकर एक सिपाही द्वारा डराए जाने की शिकायत की थी तो उसके पिता ने उल्टी उसे ही गालियां सुनाई थीं। ‘पिता तो सदा दूसरों का ही पक्ष लेते हैं, अपने परिवार का कभी नहीं। आज पुजारी की बात उनसे कैसे कहूं? वह उस पर विश्वास ही नहीं करेंगे। बाजार की घटना सुनाऊंगा तो उल्टे मेरे ऊपर ही उबल पड़ेगे कि ‘जिस दिन तुझे शहर भेजता हूं, उसी दिन झगड़ा मोल लेकर आता है।’ और कहेगें ‘तू किस दिन अपना काम ठीक तरह करना सीखेगा?’

बक्खा ने सोचा, ‘यह सब सहने से तो अच्छा झूठ ही बोल दूं।’ ‘पर झूठ तो तुरन्त ही खुल जाएगा, क्योंकि सोहिनी रोटी लेने नहीं गई। उन्होंने उससे पूछा ही होगा कि इतना शीघ्र कैसे आ गई। शायद कुछ न कहना ही अच्छा रहेगा। पर वे पूछेंगे अवश्य। खैर, देखा जाएगा जैसा भी होगा। उसने अपने मस्तिष्क के विवाद को समाप्त कर दिया और आकाश में यों ही उड़ते एक गिद्ध तथा कुछ बादलों के टुकड़ों पर दृष्टि जमायी।

व्यस्त मन के कारण बक्खा को घर की राह लम्बी नहीं लगी। उसने अपने घर वालों को झोंपड़ी के बाहर धूप सेकते पाया। भंगियों को गली में रोशनी का कोई प्रबन्ध नहीं था, इसलिए अपनी छोटी संकुचित कोठरियों में भयानक अंधकार तथा चूल्हों की सुलगती आग से उठते धुंए में संपूर्ण रात बिताने का बदला यहां के अधिकतर निवासी दिन का अधिक-से-अधिक भाग खुली हवा में बिताकर चुकाते थे। गर्मी में अवश्य यह कठिन था, यद्यपि वे जिन बान की खाटों पर रात को सोते थे उनके ऊपर फटे पुराने टाट के टुकड़े टांगकर बिताकर चुकाते थे। गर्मी में अवश्य यह कठिन था, यद्यपि वे जिन बान की खाटों पर रात को सोते थे उनके ऊपर फटे पुराने टाट के टुकड़े टांगकर बिताने बना लेते थे और दिन-भर उनके नीचे बैठे रहते थे। किन्तु जाड़ों में तो सूरज निकला और वे घरों से बाहर आये। फिर दिन-छिपे अधिक ठंठ पड़ने तक वहीं जमे रहे।

दरवाजे के बराबर बाहर जो चूल्हा उसकी मां ने बना रखा था सोहिनी ने उसे चालू रखा था। यह हिन्दू-विधि का चौका नहीं था इसमें हिन्दू धर्म निष्ठा के आधारभूत स्वास्थ्य रक्षा के नियमों के अनुसार मर्यादा

व्यस्त मन के कारण बक्खा को घर की राह लम्बी नहीं लगी। उसने अपने घर वालों को झोंपड़ी के बाहर धूप सेकते पाया। भंगियों को गली में रोशनी का कोई प्रबन्ध नहीं था, इसलिए अपनी छोटी संकुचित कोठरियों में भयानक अंधकार तथा चूल्हों की सुलगती आग से उठते धुंए में संपूर्ण रात बिताने का बदला यहां के अधिकतर निवासी दिन का अधिक-से-अधिक भाग खुली हवा में बिताकर चुकाते थे।

अंकित करने वाली चार रेखाएं नहीं थी। चूल्हे के पास दो झाड़ू रखी थी। एक खाली मैले का टोकरा, एक बाल्टी, दो मिट्टी के घड़े, एक तामचीनी का लोटा इधर-उधर फैले पड़े थे। अधिकतर बरतन मिट्टी के थे, अग्नि पर बार-बार चढ़ने के कारण काले। जब से बक्खा की मां मरी थी किसी ने उन्हें साफ नहीं किया था। क्योंकि सोहिनी अभी छोटी और अनुभवहीन थी। उसे घर से बाहर ही इतना काम करना पड़ता था कि घर के काम-धन्धे पर अधिक ध्यान देने को समय ही नहीं मिलता था। फिर, पानी की कमी थी। उनका पेशा ऐसा मैला था और ऐसे मैले वातावरण में रहने को वे विवश थे कि एक घड़े से अधिक पानी की उन्हें आवश्यकता थी, किन्तु इतना मिल नहीं सकता था। इस कारण उन्हें बिना पर्याप्त पानी के ही गुजारा करना पड़ता था, यहां तक कि शुचिता, सफाई, स्वास्थ्यरक्षा उनके लिए अर्थहीन हो गए थे।

अपनी बहन के झाड़न में बंधी रोटियां देते हुए बक्खा ने पूछा, "रक्खा कहां है?"

वह चुप रही, पर उसका पिता लक्खा बोला, "वह बदमाश बारको के लंगर से रोटी लेने गया है।"

बुड्ढा चूल्हे के पास बिछी खाट पर बैठा हुक्का पी रहा था और प्रत्येक घूंट पर दमे के मारे खांसता जाता था। वह साफ-सुथरा दिख रहा था। प्रत्यक्ष ही उसने आज चिमटी से अपने मुंह के फालतू बाल चूंटे थे। अपने तकिये के नीचे वह सदा एक फूलदार देसी दर्पण तथा एक चिमटी रखता था। और आज उसकी पुलकित सफेद दाढ़ी सुघड़ कोनों तथा पार्श्वों में छटी हुई थी। और उसके नेत्र दयापूर्ण दृष्टिगोचर होते थे, शायद इसलिए कि आज की सुबह उसने सुख और आनन्द से बिताई थी। परन्तु उसके होठ भींचे हुए थे और सुधड़ता से बंधे नीले साफे के नीचे माथे पर बल पड़े हुए थे। यदि बुलाने की आवश्यकता पड़े तो चिड़चिड़ापन उससे अधिक दूर नहीं था।

"मेरे खाने के लिए कुछ बढ़िया माल लाया है क्या?" उसने बक्खा से पूछा। "आज तो मक्का की रोटी, पालक के साग और अचार को जी कर रहा है।"

"मैं तो केवल दो चपाती लाया हूं", बक्खा ने उत्तर दिया। उसके मन में वही उधेड़बुन चल पड़ी जो सारे रास्ते चलती रही थी कि वह सब स्पष्ट कह डाले या झूठ बोले।

"तू तो बदमाश, किसी मतलब का नहीं", लक्खा बड़बड़ाया। "देखें दूसरा बदमाश भी बारकों से कुछ बढ़िया चीज लाता है या नहीं!"

उनका पेशा ऐसा मैला था और ऐसे मैले वातावरण में रहने को वे विवश थे कि एक घड़े से अधिक पानी की उन्हें आवश्यकता थी, किन्तु इतना मिल नहीं सकता था।

यों कहते-कहते जमादार के मुंह में पानी आ गया। उसकी आंखों के सामने घूमने लगे बड़े-बड़े सुस्वादु भोजनों के ढेर जो उसे शहर की गलियों में विवाहों के अवसरों पर मिलते थे- पूरी-कचौरी, साग-सब्जी, हलवा, मिठाई, अचार, मुरब्बे-सवर्ण लोगों की पत्तलों की जूठन-कभी भण्डारे से सीधे प्राप्त परोसे भी। उन दिनों को लक्खा कभी नहीं भूल सकता था, वे लक्खा को इतने प्रिय थे कि वह जिस गली में काम करता था उसकी प्रत्येक लड़की की बाढ़ को ताकता रहता था और उसके माता-पिता से पूछता रहता था कि उसके विवाह की शुभ घड़ी कब आएगी। सम्भव है कि बूलाशाह नगर के प्रत्येक बाल-विवाह का लक्खा ही कारण हो। दुलहिन के माता-पिता लक्खा को सदा याद रखते थे और उसे एक जोड़ी कपड़े तथा खाने के परोसे देते थे। एक और शुभ समय उसे याद रहता था जबकि उसकी पल्टन युद्ध से लौटी थी और तत्सम्बन्धी समारोहों में बड़ी-बड़ी दावतें हुई थी। सब भंगियों का जमादार होने के कारण बचे खाने को बांटना उसी का उत्तर-दायित्व था। उसे याद आया कि उसकी बहू जिस लकड़ी के बक्से में मिठाई बन्द कर रखती थी वह उस वर्ष तो खाली ही नहीं हुआ।

"मैं शहर के सब लोगों को अच्छी तरह नहीं जानता, इस कारण सब के घर रोटी मांगने नहीं गया", बक्खा ने बहाना बनाया। यह सुन लक्खा की उदर-वासना को धक्का लगा।

"उन्हें जानने का प्रयत्न तुझे करना ही चाहिए। मेरे मरने के बाद, बेटा, सारे जीवन तुझे उन्हीं की टहल करनी है।"

इस भविष्यवाणी ने बक्खा के नेत्रों के सामने आगामी समय का एक भयावना चित्र ला खड़ा किया-शहर की टहल और तत्सम्बन्धित अपमान-पर- अपमान। उसे दिखाई पड़ा-बाजार में इकट्ठी हुई भीड़ उसे गाली गलौज दे रही है और दिखाई दिया वह नाटा पुजारी जो हाथ उछाल-उछाल-कर चीख रहा था-'भ्रष्ट कर दिया, भ्रष्ट कर दिया!' उसे वह औरत दिखाई दी जिसने उसके ऊपर रोटी फेंकी थी और उसे नाली साफ करने पर बुरा-भला कहा था। 'नहीं, नहीं' उसका मन कहता प्रतीत हुआ, 'हरगिज नहीं।' तभी उसे दिखाई पड़ी बक्खा की एक अस्पष्ट प्रतिमूर्ति, बढ़िया फौजी वर्दी पहने हुए, गोरा-बारकों में साहब लोगों के कमोड साफ करती हुई। 'हां, उससे तो यही भला!' उस चित्र का अनुमोदन करने के लिए उसने अपने-आप से कहा।

घृणा और आसक्ति का यह विलक्षण मिश्रण था। कभी उसे अपने नगर से घृणा होती थी, कभी अपने काल्पनिक दुनिया से

आसक्ति। लोग एक स्थान के अभ्यस्त हो जाते हैं, उससे सुपरिचित हो जाते हैं; फिर एक अवस्था ऐसी आती है जब अज्ञात, परकीय का जादू उनके सिर पर चढ़ जाता है। यह वह भावना जो एक नया सामंजस्य उत्पन्न करना चाहती है और अतिपरिचित की अवज्ञा करती है, उसे बासी, फीका तथा चिर-अभ्यास के कारण निष्प्रभ ठहराती है। मस्तिष्क जब नवीन की आश्चर्य भूमि में झांक लेता है तथा उसके विभिन्न रूपों को आसक्ति तथा अभिलाषा से मनन कर लेता है तो अवश्य ही उसे आघात पहुंचता है और घोर निराशा होती है जब सजीव वास्तविकता कल्पना के छलांग मारते थोड़े की रास खींच लेती है। बच्चे के-से अविकसित, आशान्वित तथा विस्मित नयनों से विश्व को निहारना लोगों को कितना प्रिय है! बक्खा की निष्कपट रूचियों के सभ्रम चापल्य निरूपण भी किये जा सकते हैं और क्षम्य भी हैं। उसे अपना घर, अपनी गली, अपना गनर सब अरूचिकर थे; क्योंकि वह टौमी बारकों में काम कर चुका था और एक दूसरी ही विलक्षण तथा सुन्दर दुनिया की झांकी ले चुका था; वह अपने देसी जूतों से आगे बढ़कर उन फौजी बूटों में घुस गया था जो उसे बख़्शिश में मिले थे। इन बूटों तथा परिधान के अन्य विचित्र तथा विदेशी अवयवों से उसने एक नये संसार का सृजन किया था, जो प्रशंसनीय था, कम से कम इसलिए कि उसके जन्म से प्राप्त जीवन के जड़ विधान तथा सड़ी-बूसी रूढ़ियों से परिवर्तन का द्योतक था। अपने ढंग का वह 'मार्गप्रवर्तक था, यद्यपि यह शब्द उसने सुना भी नहीं था, न वह जानता था कि यह शब्द उसके लिए प्रयुक्त हो सकता है।

"आज मामला क्या है?" बक्खा की आंखों में हिम्र प्रकाश तथा उसकी उदासीन भाव-भंगिमा को लक्ष्य कर उसके पिता ने पूछा। "क्या तू थक गया है?"

इसने फिर बक्खा के मन में उथल-पुथल प्रारम्भ कर दी। बताए या न बताए? प्रश्न के सहानुभूतिमय स्वर ने उसकी हृत्तन्त्री के तारों को झंकृत कर दिया। अपने पिता के ढंग में छिपी आशंका पर तो वह रोने को तत्पर हो गया। वह क्षण-भर ठिठका। फिर भी भेद को गुप्त रखने का प्रयत्न करते हुए बोला, "कुछ नहीं, कुछ भी तो बात नहीं है।"

"कुछ नहीं! कुछ भी नहीं!" उसके पिता ने दोहराया। "कुछ कैसे नहीं? अवश्य कुछ मामला है! सच-सच क्यों नहीं बताता?"

बक्खा ने अनुमान किया कि इस भेद को गुप्त रखने के घोर प्रयत्न में तो वह टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा। आज उसके पिता की असाधारण सहानुभूति ने उसके हृदय को हिला दिया। उसका सांस घुटने लगा। उसे निश्चय हो गया कि वह अधिक समय तक उस दशा में नहीं रह सकता। अपने सदा के बातचीत के साधारण ढंग से विपरीत एक विस्फोट के रूप में बोल पड़ा- "उन्होंने आज सुबह मेरा अपमान किया- उन्होंने आज मुझे गालियां दीं, केवल इसलिए कि मैं चल रहा था तो एक आदमी मुझ से छू गया, उसने मेरे एक थप्पड़ मारा। मेरे चारों तरफ भीड़ एकत्रित हो गई, मुझे गालियां दीं और ...." वह और अधिक नहीं बोल सका। अपने ऊपर ही करूणा की एक शक्तिशालिनी भावना से वह पराभूत हो गया।

उसे निश्चय हो गया कि वह अधिक समय तक उस दशा में नहीं रह सकता। अपने सदा के बातचीत के साधारण ढंग से विपरीत एक विस्फोट के रूप में बोल पड़ा- "उन्होंने आज सुबह मेरा अपमान किया- उन्होंने आज मुझे गालियां दीं, केवल इसलिए कि मैं चल रहा था तो एक आदमी मुझ से छू गया, उसने मेरे को एक थप्पड़ मारा। मेरे चारों तरफ भीड़ एकत्रित हो गई, मुझे गालियां दीं और ...." वह और अधिक नहीं बोल सका।

'पर बेटे' दया और क्रोध-मिश्रित स्वर में लक्खा बोला, "क्या तू अपने आने की आवाज नहीं लगा रहा था?"

इसने बक्खा की आत्मा को प्रज्वलित कर दिया। वह बैठकर पछताने लगा कि क्यों उसने अपने पिता को यह सब बताया। 'मैं तो जानता था कि सच्ची बात बताने पर वह यों ही कहेंगे', उसने सोचा।

अपने पुत्र की विशेष उत्तेजना को जांचकर क्रोध को दबाते हुए अधिक दयार्द्र स्वर में लक्खा ने फिर पूछा, "मेरे लाल, तूने अधिक संभल कर काम क्यों नहीं किया?"

"पर, पिता, सब व्यर्थ है!" वह चिल्लाया। "वे तो हमारे साथ बुरा ही बर्ताव करेंगे, चाहे हम चिल्लावें भी। वे हमें धूल से अधिक नहीं समझते, क्योंकि हम उनकी धूल सकेरते हैं। मन्दिर के उस पण्डित ने सोहिनी के साथ बलात्कर की चेष्टा की और फिर चिल्लाता हुआ आया, 'भ्रष्ट कर दिया! भ्रष्ट कर दिया!' सुनारों की गली में उस ऊंचे घर की औरत ने चौथी मंजिल से मेरे ऊपर रोटी फेंकी। मैं अब कभी शहर में नहीं जाऊंगा। मेरे बस का यह काम नहीं।" ■

(इंडिया बुक सेन्टर, नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित 'अछूत' से साभार)

(शेष अगले अंक में)

गिरोह

■ रजतरानी 'मीनू'

शाम के अखबार में बड़े शीर्षक से खबर छपी थी, 'गिरोह का पर्दाफाश 10 लोगों की फांसी की सजा को उम्रकैद में बदला।' खबर पढ़कर बस में बैठे यात्री चौंके। सुषमा भी मार्किट से लौटते हुए एक अखबार खरीद लाई। उसने घर में बच्चे खिला रहे, पति महोदय को खबर दिखाई तो उन्होंने कोई खास प्रतिक्रिया व्यक्त नहीं की।

''क्यों आपको खबर ने चौंकाया नहीं।'' सुषमा ने पूछा।

''क्योंकि मैं कहानी जानता हूं।'' सुषमा के पति ने जवाब दिया।

''क्या जानते हैं आप?''

पत्नी के पूछने पर उन्होंने कहा।

''उस दिन स्वतंत्रता दिवस के कार्यक्रम में भाग लेने वाले पांच-सात लड़के विद्यालय-प्रांगण में बैठे गप्पें मार रहे थे। जातियों का प्रसंग छिड़ा था, तो सुरेश चौधरी नामक लड़के ने कहा था, ''यार कल मेरे गांव के चमट्टे को हमारी बिरादरी ने खूब पीटा। कारण, वे हरामजादे मजदूरी करने से मना कर रहे थे। इन सालों की इतनी हिम्मत? हमारी रोटियों पर पले हम सीधा बोलते हैं, इनकी औकात ही क्या है? मेरे पिताजी के कहने पर हमारे आदमियों ने तो उन्हें अधमरा कर दिया। खूबा चमार तो भंगियों के छप्परों में घुस गया, इसलिए उसे छोड़ दिया। नहीं तो उसकी तो कहानी ही खत्म हो जाती।''

यह सुनकर कैलाश शर्मा बोला, ''पिछले साल इन्हीं सालों की जमीन तुम्हारे घरवालों ने छीनी थी।''

सुरेश चौधरी पुनः चहकता हुआ बोला, ''जमीन इनकी थोड़े ही थी, वहां तो हमारे पास रेहन (गिरवी) रखी थी। कंगन समय पर नहीं छुड़ा पाए तो डूब गई। और डूबती भी ना तो उन्हें कौन से हम वापस देते। हमारे बाबा ने पांच बीघा से पचास बीघा जमीन कोई जादू से थोड़े ही बढ़ाई है। इन्हीं मूर्खों से ली है।''

प्रदीप वर्मा ने उत्साह के साथ कैलाश शर्मा के घर की पोल खोलते हुए कहा, ''तुम्हारे बड़े भईया ने तो एक चमारी से शादी कर ली है। उसे क्यों छुपाते हो।''

कैलाश ने प्रदीप को डपटते हुए सचेत किया कि, ''खबरदार मेरी भाभी को चमारी कहा तो, वह तो बहुत रईस-सीनियर आई.ए.एस. की बेटी हैं और खुद भी आई.ए.एस. की परीक्षा में बैठ रही हैं।''

प्रदीप ने खिसियाते हुए कहा, ''है तो चमारी ही। ऊंची नौकरी पर होने से जाति थोड़े ही बदल जाती है।''

कैलाश ने पुनः जोर देते हुए कहा, ''बदल कैसे नहीं जाती। जमाना बदल रहा है, जाति भी बदल रही है और इंसान भी बदल जाते हैं। क्या तू नहीं जानता लड़की की शादी होते ही उसकी जाति वही हो जाती है जो उसके पति की होती है। क्या वर्मा की बेटी शर्मा से शादी करने पर मिसेज शर्मा नहीं हो जाती।''

''आपस में क्यों झगड़ रह हो?'' तीनों को समझाने के अंदाज में ज्ञानदेव मिश्रा ने कहा, ''मैं तुम लोगों को अपने दूर के रिश्तेदार की कहानी बताता हूं। मेरी ममेरी बहन की बेटी ने अखबार में इश्तहार देखकर प्रगतिशील दिखने वाले नौजवान से शादी की, लेकिन वह जाति का 'पासी' था। इतना ही नहीं मेरी ममेरी भांजी कुसुम के पति ने कुसुम का पासी जाति का प्रमाण-पत्र बनवा दिया। फिर क्या था कुसुम पढ़ने में तो होशियार नहीं थी लेकिन उसके मां-बाप कोई एस.सी. तो थे नहीं जो बेटों को अफसर बनाना चाहते हों और बेटियों को कामचलाऊ शिक्षा दें। उसे तो बेटे से ज्यादा मौका दिया था पढ़ने का। अच्छा स्कूल, अच्छा ट्यूटर-किताब, अच्छे विषय आदि सब। एक जिम्मेदार मां-बाप का फर्ज पूरा किया। अतः वह रेलवे में आरक्षण पाकर अफसर पद पर प्रथम परीक्षा में उतीर्ण हो गई, वह ठाठ से नौकरी कर रही है। कुसुम तो कहती है कि मैं अपने हसबैंड के गांव एक बार गई थी, वहां उनके मौहल्ले में बहुत बदबू आती है। वहां के मर्द-औरतें और बच्चे मैले-कुचैले कपड़े पहने घूमते-फिरते हैं। गंदी काली-खूसट बूढ़ी औरतें मेरे दोनों हाथ पकड़-पकड़कर चूमती थीं। तब मुझे बहुत गुस्सा आता था। लेकिन क्या करूं? कुछ दिन तो निभाना ही है। मैंने उससे पूछा, ''क्या मतलब निभाना है।''

''मतलब साफ है, मैं ज्यादा समय उसके साथ नहीं रह सकती। मेरा पति बहुत संकीर्ण हो गया है। उसकी मां, बहन, भाई सभी पिछड़े हुए हैं। निरे निपट देहाती। न रहने का सलीका, न खाने की तमीज। आकर यहां आठ-आठ दिन जमे रहते हैं। मैंने तो कह दिया, न बाबा मैं नहीं रह सकती। मैं यथाशीघ्र तलाक ले लूंगी। लेकिन समस्या एक ही है कि वह बहुत चाहता है। पता नहीं मुझे या मेरी नौकरी को? तलाक आसानी से देगा नहीं। है तो

भोंदू लेकिन मुझसे ज्यादा पढ़ा-लिखा है और व्यवहार में तो एकदम लल्लू है। लेकिन मन को बहुत भाता है।''

पांचवे लड़के विमल झा ने सभी का ध्यान दूसरों की बातों से हटाते हुए पास बैठे मित्रों के भविष्य की चिंता कर सभी को संबोधित कर गंभीर बात कही कि, ''मुझे तो वी.पी. सिंह पर गुस्सा आता है। जिसका संबंध एक राजघराने से था और है भी खुद राजपूत, फिर भी उसने इन भंगी-चमारों के बाद पिछड़ों, अति-पिछड़ों को भी आरक्षण दे दिया।''

राकेश रस्तोगी समझदार व तीव्र बुद्धि का था, हालांकि उसने कभी राजनीति को विषय के तौर पर नहीं पढ़ा था। विमल झा की बात को काटते हुए वह बोला, ''इसमें दोष वी.पी. सिंह का नहीं हैं। बल्कि हमारे दुश्मन तो अम्बेडकर और कांशीराम हैं। अम्बेडकर ने संविधान में इन लोगों को रिजर्वेशन की वकालत करके और कांशीराम ने लगभग 1980 से बहुजन समाज को संगठित कर राजनैतिक चेतना फैलाई। अम्बेडकर की तरह आरक्षण नहीं मांगा बल्कि सत्ता पर कब्जा करने की महत्वाकांक्षा पैदा की। बल्कि यह कहा कि बहुजन आरक्षण दे। मांगता क्यों है? और मांगते रहने से तो पचास साल में पचास प्रोफेसर तक विश्वविद्यालयों में नहीं हुए। जबकि इनमें से एक-एक भी देते डेढ़ सौ होते। हां जब तुम देने वाले बनोगे तब ये मांगेंगे। अपने अस्तित्व के लिए थोड़ी जगह हम तो सत्ता में आने पर जाति अनुपात में आरक्षण देंगे। वी.पी. सिंह ने तो राजनैतिक दबाव में पिछड़ी जातियों के लिए राजनैतिक कमीशन का समर्थन किया था।''

विमल झा पुनः निराशा के स्वर में कहने लगा- ''हमारे देश से कितने ही युवा आत्मदाह करके चले गए। अब हम लोग ऐसे ही मारे-मारे फिरेंगे। क्योंकि ये नौकरियां तो सब ऐरों-गैरों को ही मिलेंगी।'' कहते-कहते और निराशा के साथ बोला, ''हम लोगों को पढ़ना-लिखना छोड़ देना चाहिए।''

अरुण रस्तोगी ने कहा- ''मेरे दिमाग में तो एक बात आ रही है,''।

उपस्थित सभी ने उत्सुकता से पूछा, 'क्या?''

सभी ने एक स्वर में खुशी का इजहार करते हुए समर्थन में कहा, ''बात तो ठीक है, लेकिन बिजनेस हम सब लोगों के बस की बात नहीं और न ही एक ही काम सब लोग कर सकते हैं और फिर नौकरी करना इन चूहड़े-चमारों की बपौती थोड़े ही है। वैसे भी ऊंची इज्जत की नौकरियों पर तो हम ही हैं। जज कौन हैं, डॉक्टर, इंजीनियर कौन हैं? विश्वविद्यालयों, कॉलेजों में प्रोफेसर और प्रिंसिपल कौन हैं? अखबारों-पत्रिकाओं के संपादक कौन हैं? अरे हम सब जगह हैं तो क्या आसानी से गायब हो जायेंगे? निराश होने की जरूरत नहीं।''

''हम सबको पढ़ाई तो करनी चाहिए। थोड़ी-सी हिसाब-किताब लायक और नौकरी का चक्कर छोड़कर बिजनेस करना ठीक रहेगा। उसमें आमदनी भी ज्यादा है और मालिकाना हक भी बना रहेगा। और उन निजी क्षेत्रों में हम इन सबको फटकने भी नहीं देंगे। आयेंगे तो मैरिट में या फिर सफाई-कर्मचारियों के रिजर्व कोटे से।''

सभी ने एक स्वर में खुशी का इजहार करते हुए समर्थन में कहा, ''बात तो ठीक है, लेकिन बिजनेस हम सब लोगों के बस की बात नहीं और न ही एक ही काम सब लोग कर सकते हैं और फिर नौकरी करना इन चूहड़े-चमारों की बपौती थोड़े ही है। वैसे भी ऊंची इज्जत की नौकरियों पर तो हम ही हैं। जज कौन हैं, डॉक्टर, इंजीनियर कौन हैं? विश्वविद्यालयों, कॉलेजों में प्रोफेसर और प्रिंसिपल कौन हैं? अखबारों-पत्रिकाओं के संपादक कौन हैं? अरे हम सब जगह हैं तो क्या आसानी से गायब हो जायेंगे? निराश होने की जरूरत नहीं।''

उस ग्रुप का दादा राजबहादुर चतुर्वेदी अब तक चुपचाप सबकी बातों को गौर से सुन रहा था। सबसे बाद में सबका नेतृत्व करते हुए बोला, ''जब तक यह तुम्हारा बॉस जिंदा है तुम्हें किसी को बिल्कुल चिंता करने की जरूरत नहीं। हम सब तरीके निकाल लेंगे। फासीवाद-मार्क्सवाद सभी पढ़ा हैं मैंने।''

सभी आश्चर्य से उसकी अनोखी सोच के निर्णय का बेसब्री से इंतजार करते हुए बोले, ''बॉस जल्दी बताओ, तुम्हारी वाणी सुनने को बेताबी हो रही है। अब रहा नहीं जाता। तुम्हारी बात ही कुछ और होती हैं।''

राजबहादुर धीरे से बोला, ''यह बात बहुत टॉप सीक्रेट है। हम लोगों के अलावा किसी को हवा भी नहीं लगनी चाहिए।''

सभी ने हां-हां कहते हुए स्वर में स्वर मिलाया। उन सभी को बैठे हुए चार घंटे हो गए। सूरज ढलने लगा था। कॉलेज के सभी छात्र अपने-अपने गंतव्य को रवाना हो चुके थे। ग्राउंड में सन्नाटा छा रहा था। राजबहादुर ने अपनी रहस्यता खोलते हुए कहा, ''हम लोग एस.सी., एस.टी. या ओ.

बी.सी. सर्टिफिकेट बनवा लेते हैं। फिर देखते हैं, हमें कैसे नौकरी नहीं मिलती? कम परिश्रम, पूरी सुविधाएं, ऊपर से रियायतें। यह सब करके भी अगली कक्षा में प्रवेश भी आसानी से मिल जाएगा। यह सर्टिफिकेट बनने पर हमारी चांदी ही चांदी होगी। वजीफा भी मिलेगा। हमें पॉकेट मनी के लिए मम्मी-पापा के पास हर महीने गिड़गिड़ाना भी नहीं पड़ेगा।''

उनमें से एक लड़के ने प्रश्न करते हुए कहा, ''वजीफा की तो तू छोड़, जितना इन्हें एक साल में सरकार देती है उतना हम दो दिन में सिगरेट फूंक देते हैं। हां हमें ऊंची नौकरियों पर अपनी पिछली पीढ़ियों की तरह कब्जा कायम रखना चाहिए। लेकिन बिल्ली के गले में घंटी कौन बांधेगा? अर्थात् यह फर्जी सर्टिफिकेट बनेगा कैसे? बनवाएगा कौन? और बनाएगा कौन? पकड़े गए तो सजा कौन भोगेगा?''

राजबहादुर बोला, ''यह काम तू मुझ पर छोड़। बहुत आसान है। मेरे सगे चाचा लखीमपुर में सदर एस.डी.एम. हैं। हमारा सीधा एस.डी.एम. का प्रमाणपत्र होगा तब किसी को शक भी नहीं होगा कि ये फर्जी है और एक रहस्य मैं आज तुम लोगों का हौंसला बढ़ाने के लिए बता रहा हूं। हमें डरने की कोई जरूरत नहीं है। हमारे पिताश्री जो आजकल कर्नल की पोस्ट पर कार्यरत हैं। उनका फर्जी सर्टिफिकेट की वजह से बहुत जल्दी नौकरी मिल गई थी। असली एस.सी. के तो अफसर भी कम ही होते हैं। जो होते भी हैं, वह कानून के गुलाम भर होते हैं और दब्बू। हृदयहीन मशीन की तरह काम करते हैं। ये लोग अपने वर्ग का तो जायज काम भी नहीं कर पाते।

''मेरे पिताजी के बारे में आज तक किसी को पता नहीं चला। यह बात हम दोस्तों के बाहर नहीं जानी चाहिए। यह मेरी चेतावनी है।''

अरुण रस्तोगी ने मजाक के लहजे में कहा, 'बॉस, एकाध रहस्य और बता दो, बड़ा मजा आ रहा है।'' जैसे कोई तिलस्मी किस्सा सुना रहा हो।

''अच्छा तुम लोग चाहते हो तो सुनो, वैसे इतना ही काफी था। मेरे मामा की दोनों बेटियां और बेटे एम.ए. से पहले थर्ड क्लास थे। और एम.ए. में तिवारी जी से चतुर्वेदी को चिट्ठी लिखवा कर उनका बेटा ले गया। उन्होंने रोल नम्बर दे दिए और दोनों को प्रथम श्रेणी मिली। प्रैक्टिकल में तो 100 में 99 फीसदी अंक मिले। जबकि एस.सी. साले मुंह ताकते रह गये और फेल कर दिए। बाद में दोनों के लिए यही हुआ। 1993 तक स्वयं गाइड ने दस हजार लेकर एक थीसिस टाइप करा दी। लेक्चररशिप के इंटरव्यू में द्विवेदी जी बैठे थे, बनारस वाले। सलैक्शन हो गया। आज 8 हजार माहवार ले रही है।''

उनमें से एक लड़के ने कहा, ''अरे ऐसी बातें मत बता; दीवारों के भी कान होते हैं। अकादमिक भ्रष्टाचार के किसी खोजी पत्रकार ने सुन लीं तो छाप देगा।''

''कैसे छाप देगा? क्यों छाप देगा? अरे पत्रकार कौन-सा साला एस.सी. होगा? होगा तो अपना ही।'' राजबहादुर चतुर्वेदी पुन: बोला, ''देख मैं मूड में हुआ करूं तो रोके मत कर, ला दो घूंट और पिला दे!'' राजबहादुर ने बोतल पकड़ी और गटर-गटर सीधी डकारने लगा ''बाकी डाल दे गाड़ी की डिग्गी में।''

●

रविवार के दिन सुबह राजबहादुर चतुर्वेदी लखीमपुर अपने चाचा के निवास पर पहुंच गया। उसके चाचा टी.वी. पर रविवार को मनोरंजन के प्रमुख कार्यक्रम देख रहे थे। नौकर टेबल पर नाश्ते के लिए पकौड़ी, चार-पांच प्रकार की गुलाब जामुन आदि सजा कर रख गया था। राजबहादुर ने अचानक बंगले के लॉन की ओर से प्रवेश किया। उसे अचानक आया देखकर चाचा खुश हुए और साथ ही खाने की मेज पर बिठा लिया। चाचा अमरसिंह के खुशनुमा मूड को देखते हुए वह उनसे बोला, ''चाचाजी, जरूरी काम से आया हूं, इजाजत हो तो कहूं।''

चाचाजी ने उससे कहा, ''अच्छा-अच्छा कह, क्या काम है?''

''लेकिन आपको वायदा करना होगा कि जो काम मैं आपसे कहूंगा, उसे आप जरूर करेंगे।''

अमरसिंह चतुर्वेदी ने कहा, ''बोल भी क्या काम है।''

राजबहादुर बोला, ''चाचा हमें कुछ एस.सी. सर्टिफिकेट चाहिए। पर आप देख लें इसमें रिस्क भी है।''

अमरसिंह ने कहा, ''बस इतनी-सी बात है। इसमें वायदा कराने की क्या जरूरत पड़ी। अरे बेटा! मैं और तेरे पापा दोनों पुराने खिलाड़ी हैं। हम सभी ने यही काम किये थे। नहीं तो हम अभी भी मक्खी मार रहे होते या कहीं सत्यनारायण की कथा बांचते घूमते, शादी के मुहूर्त बताते अथवा हस्तरेखा देखकर पेट पाल रहे होते। अरे हम तो अपनी तुम जैसी संतानों पर गर्व करते हैं। तुम्हारे लिए नौकरी का रिस्क क्या, अरे जिंदगी भी दांव पर लगे तब भी हमें आरक्षण नीति को विकृत, निष्क्रिय भावी करने में कमी नहीं छोड़ेंगे। आखिर देशभक्ति का हमारा संकल्प जो है। ये नीच कौमों के कलेक्टर बनकर हम पर रौब जमाते हैं। इन्हें जरा भी अपनी औकात का अहसास नहीं है। ठीक है बेटा तुम ठीक ही कर रहे हो। पर करो चतुराई और सावधानी से। हमारे पूर्वजों ने तीन हजार साल से इन अछूतों की ऐसी-तैसी की। इन्हें तुच्छ प्रलोभनों की हड्डियां फेंकी और ये कुत्तों की तरह लड़ते रहे और चूसते रहे। अब ये कुछ इतिहास की चालें समझने लगे हैं। खैर तुम फ्रिक मत करो। कल तहसील में आ जाना, मैं तुम्हें सब कागजात कम्पलीट करवा के दे दूंगा। सब काम ठीक हो जाएगा।''

वहां से वापस लौटकर राजबहादुर ने अपने साथियों को यह खुशखबरी दी। सुनकर सभी साथी खुशी के मारे उछल पड़े।

तब राजबहादुर बोला, ''अब देखता हूं कि हमें अगली कक्षा में जाने पर कम मार्क्स का हवाला देकर कौन रोकता है?''

''अरे मार्क्स की तुम लोग चिंता मत करो, मार्क्स के मामले में तो हमें पूरा मार्क्सवादी बनना है।'' एक ने उसकी बात काटते हुए हास्य की चुटकी ली।

''अपने अग्रवाल सर एक तो जाति देखते हैं और मिठाई का डिब्बा, प्रैक्टिकल में 100 में 90 और लिखित में भी वे जुगाड़ बता देते हैं। गुरु द्रोण का आशीर्वाद अर्जुन की जीत और एकलव्य की ऐसी-तैसी।'' इस पर फिर हंसी का फव्वारा छुटा।

ज्ञानदेव मिश्र बोला, ''वैसे भी हम लोग 50-55% मार्क्स लाते ही हैं। अब हम 93% तक लायेंगे। जो असली एस.सी. हैं उनका रास्ता भी काटकर आगे आ जायेंगे। ये दरिद्र जिन्हें कभी छात्रावास तक की सुविधाएं नहीं मिलीं ये अपनी जिंदगी में 55% मार्क्स ला ही नहीं पाएंगे। अब हमें परिश्रम करने की आवश्यकता नहीं। अरे एक स्कूल शिक्षक से अधिक यू.जी.सी. की छात्रवृत्ति तो 99% हमें ही मिलती है एस.सी.-एस.टी. को मिलता है झुनझुना।''

एक दिन मुकेश सक्सेना को कक्षा में क्लर्क ने वजीफा से संबंधित काम से बुलाया। असल में इस गिरोह के साथ एक और दिक्कत थी। इन्होंने फर्जी प्रमाण पत्रों में जाति प्रतीक नहीं जोड़े थे; जोड़ते कैसे उन सबमें कोई एस.सी. जाति का सूचक तो था नहीं। वे थे तो सब सवर्ण सूचक ही परंतु बाहर समाज में यहां तक कक्षा में तो सहपाठी उन्हें शर्मा, वर्मा, द्विवेदी और चतुर्वेदी और सक्सेना वगैरा जाति सूचकों से ही जानते थे। बल्कि यहां नाम कम सरनेम ज्यादा प्रचलित थे। कक्षा से मुकेश के जाने के बाद ही टीचर नित्यानंद उपाध्याय ने धीरे से कहा, ''ये चमार-भंगी सिर्फ वजीफे के लिए पढ़ते हैं।'' उनकी इस बात को क्लास के लगभग सभी छात्रों ने सुना था। हालांकि एस.सी. सूची में सैकड़ों जातियां हैं, किंतु व्यंग्य बाणों से

ज्ञानदेव मिश्र बोला, ''वैसे भी हम लोग 50-55% मार्क्स लाते ही हैं। अब हम 93% तक लायेंगे। जो असली एस. सी. हैं उनका रास्ता भी काटकर आगे आ जायेंगे। ये दरिद्र जिन्हें कभी छात्रावास तक की सुविध ाएं नहीं मिलीं ये अपनी जिंदगी में 55% मार्क्स ला ही नहीं पाएंगे। अब हमें परिश्रम करने की आवश्यकता नहीं। अरे एक स्कूल शिक्षक से अधिक यू.जी.सी. की छात्रवृत्ति तो 99% हमें ही मिलती है एस.सी.-एस. टी. को मिलता है झुनझुना।''

घायल होते हैं सिर्फ भंगी-चमार। मुकेश के अन्य साथियों को क्रोध आया परंतु वह कक्षा में रिएक्ट करके कोई बंवडर खड़ा करना नहीं चाहते थे और मन में चोर छिपा ही था कि यदि हम कहें कि हम एस.सी. नहीं हैं तो हमारा राज खुल जाएगा। यह सोचकर सभी साथी कड़वे जहर की भांति उस बात को पी गए। अब पूरी कक्षा को पता चल गया कि छः-सात लड़कों का जो ग्रुप है वह चूहड़े-चमारों का ग्रुप है। शर्मा, वर्मा, ठाकुर आदि लड़के उनके साथ अजीब सा व्यवहार करने लगे। जैसे कि वह वाकई छोटी जाति के हों। दिन-ब-दिन चतुर्वेदी के मित्रों को अन्य लड़कों व शिक्षकों का व्यवहार अखरने लगा।

एक दिन प्रदीप वर्मा पानी पी रहा था। तभी एक लड़के ने व्यंग्य किया-''अबे हम इस नल से पानी नहीं पिएंगे यह एक अछूत के हाथों से अपवित्र हो गया है। हम कल से बोटल में घर का पानी लायेंगे।''

प्रदीप वर्मा व अन्य साथियों में मुठभेड़ भी हो गई। राजबहादुर ग्रुप के लड़कों ने चेतावनी दी-''जबान संभाल के बात कर हम कोई असली एस.सी. नहीं हैं।''

''क्या कहा, क्या कहा!! असली एस. सी. नहीं हो तो सरकार के वजीफे की रकम क्यों ऐंठते हो। चतुर्वेदी, वर्मा, शर्मा, सक्सेना लगाने से तुम्हारी जाति थोड़े ही छिप जाएगी। यह तो नागरिक स्वतंत्रता की देन है कि कोई भी व्यक्ति अपना सरनेम कुछ भी लगा सकता है।'' यह विरोधी पक्ष के एक लड़के ने प्रति उत्तर में कहा। बी. ए., एम.ए. करने तक राजबहादुर ग्रुप के लोग खुले आसमान में रहने पर भी काल-कोठरी में बंद जैसी घुटन महसूस करने लगे। विश्वविद्यालय के शिक्षकों का रवैया और अधिक उदासीन दिखने लगा। ऊपरी दिखावे में कोई जाति-भेद नहीं था परन्तु शिक्षकों की मानसिकता जाति-स्वार्थ से लिप्त थी। और वे शैक्षिक अस्पृश्यता भावना से पागलपन की सीमा तक ग्रसित थे। राजबहादुर अपनी कक्षा में सर्वाधिक अंक लाता था, फिजीकली दबंग लड़का था। एम.फिल. की प्रवेश परीक्षा (साक्षात्कार) में वसुदेव विश्वविद्यालय में उसको नहीं लिया गया था। अब उसके गुस्से की पराकाष्ठा थी। उसने हिन्दी विभागाध्यक्ष प्रो. कृष्ण कुमार झा से सीधे मुलाकात की-''यदि आप 'झा' ब्राह्मण हो

तो मैं भी कोई ऐरा-गैरा नहीं हूं सर।'' हालांकि यह भेद उसने अकेले में खोला था। किन्तु यह बात चेम्बर के बाहर खड़े हुए डेमोक्रेटिक छात्रों और अध्यापकों के कानों में भी चली गई। उनमें खड़े त्रिपाठी जी ने कहा, ''अरे हैं तो हम भी सवर्ण परन्तु किसी का हिस्सा नहीं खाते, हरिजनों का हक खाना महात्मा गांधी की आत्मा का मांस खाने के बराबर है। हम यह बर्दाश्त नहीं करेंगे। यह हमारे वर्ग पर धब्बा है।''

उन्होंने एस.सी. छात्रों और नवनियुक्त एक शिक्षक से कहा, ''तुम ये मुद्दा उठाओ।'' तो उनकी पिंडली कांप गई। बोला, ''सर मुझे तो किसी एस.सी. से कोई लेना-देना नहीं। मैं रिजर्व कोटे से जरूर हूं पर मैं हूं तो पूरे समाज का हूं, अकेले अछूतों का नहीं।'' आखिर त्रिपाठी जी ने ईमानदार छात्रों के साथ मिलकर उसकी शिकायत ऊपर पहुंचाई। पहले तो उन्होंने एस.सी.-एस.टी. सांसदों के फोरम से बात की। तो फोरम ने कहा, ''हमें सभी के वोट चाहिये। यह मुद्दा हम नहीं उठा सकते। हम तो राष्ट्रपति उम्मीदवार तक चाहते हैं कि वह राजनैतिक स्वतंत्रता का सेनानी रहा हो। तो जाहिर है वह अम्बेडकर की सामाजिक स्वतंत्रता की मुहिम में शामिल नहीं रहा होगा। और तो और अगर डॉ. अम्बेडकर आज स्वयं देश के राष्ट्रपति पद के उम्मीदवार होते हम उनसे यही सवाल करते कि क्या तुम गांधी-नेहरू की तरह (राजनैतिक) स्वतंत्रता सेनानी रहे हो।''

त्रिपाठी जी के छात्रों को दलित नेतृत्व से आश्चर्यजनक दलित विरोधी बयान सुनकर गहरी निराशा हुई, फिर भी वह एस.सी.-एस.टी. कमीशन से मिले। वहां बातें तो बहुत अच्छी-अच्छी हुईं परन्तु एक्शन की संभावना दिखाई नहीं पड़ी। कमीशन के एक वरिष्ठ सदस्य ने संदेह की दृष्टि डालते हुए कहा, ''एस.सी. के फर्जी प्रमाण-पत्रों का मामला स्वयं अनुसूचित जातियों का मामला है, इस मामले में आप जनरल वालों ने टांग क्यों अड़ाई है। और फिर यह किस दावे से कहा जा सकता है कि उच्च शिक्षा के क्षेत्र में असफल रहे किसी दलित छात्र या छात्रा की मनगढ़ंत कहानी यह डेमोक्रेसी के जमाने में कायदे-कानूनों का मजाक उड़ाना है, कृपया करके आप हमारा वक्त जाया मत करिए, हम खाली लोग नहीं हैं। हमारे पास देश भर के दलितों की समस्याएं हैं समाधान के लिए।''

उन्होंने एस.सी. छात्रों और नवनियुक्त एक शिक्षक से कहा, ''तुम ये मुद्दा उठाओ।'' तो उनकी पिंडली कांप गई। बोला, ''सर मुझे तो किसी एस.सी. से कोई लेना-देना नहीं। मैं रिजर्व कोटे से जरूर हूं पर मैं हूं तो पूरे समाज का हूं, अकेले अछूतों का नहीं।'' आखिर त्रिपाठी जी ने ईमानदार छात्रों के साथ मिलकर उसकी शिकायत ऊपर पहुंचाई। पहले तो उन्होंने एस.सी.-एस.टी. सांसदों के फोरम से बात की। तो फोरम ने कहा, ''हमें सभी के वोट चाहिये। यह मुद्दा हम नहीं उठा सकते। हम तो राष्ट्रपति उम्मीदवार तक चाहते हैं।

अंततोगत्वा यह मामला पुलिस के द्वारा सी.बी.आई. को दिया गया। सी.बी.आई. ने बड़ी मुश्किल से यह खोज निकाला कि ऐसे गिरोह इसी तरह देश भर में सक्रिय हैं।

वे सब एस.सी. का फर्जी प्रमाण-पत्र इस्तेमाल कर रहे हैं। मामला कोर्ट-कचहरी तक पहुंचा। इतना ही नहीं इस प्रकार के गिरोह का पुष्टि-पोषण जो 'ज्ञानी सवर्ण मंडल' कर रहा था। उसने अपने मंडल में सीक्रेट प्रस्ताव रखा कि, ''जिस प्रकार गांव में भूस्वामी भूमि पर अपना कब्जा रखते हैं और शहरों में भवनदार लोग फुटपाथियों की चिंता नहीं करते हैं। उसी प्रकार हमें उच्च शिक्षा पर भी अपना वर्चस्व बनाये रखना है। जब कभी अनुसूचित जाति, जनजाति के शैक्षिक विकास का प्रश्न उठता, तब ये मंडल अपनी पूर्व निश्चित विरोधी भूमिका निभाते हुए इन लोगों के विकास के प्रश्नों को आड़े हाथों लेता। इस 'ज्ञानी सवर्ण मंडल' ने यू.जी.सी. और मानव संसाधन विकास मंत्री के आदेशों को भी फिजूल बताया और कहा कि, ''विश्वविद्यालय स्वायत्त संस्था है। इसलिए जरूरी नहीं कि वह किसी सरकार के आदेशों का पालन करे। वैसे भी हमारा अपना लोकतंत्र है। हम जो देश के हित में सही मानते हैं वही करते हैं। हमें यह तथाकथित राष्ट्रीय आरक्षण नीति पसंद नहीं। इसलिए पिछले पचास साल से इसे लागू नहीं होने दिया। अनुसूचित जाति के पदों को या तो खाली रखो या सवर्णों से उन पदों को भरो क्योंकि हमको आशंका थी कि साम्प्रदायिकता की तरह जाति-संघर्ष हो सकता है। अतः हमने देश की एकता को बनाए रखा है। हमारे योगदान का मूल्यांकन तो भविष्य ही करेगा।''

सर्वोच्च न्यायालय ने अपने फैसले में संबंधित 10 व्यक्तियों को फांसी की सजा सुनाई, जिसे राष्ट्रपति ने उम्र कैद में तब्दील किया। ■

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर - जीवन चरित

■धनंजय कीर

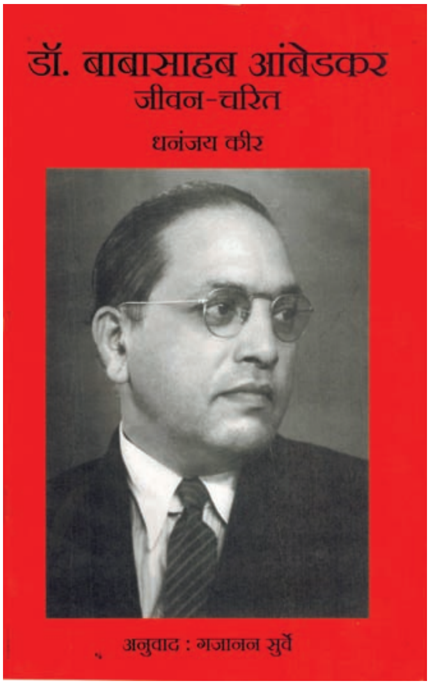

लंदन पहुंचने पर अम्बेडकर ने लंदन स्कूल ऑफ इकॉनॉमिक्स एण्ड पोलिटिकल साइंस संस्था में अध्ययन शुरू किया। उन्होंने बैरिस्टरी का अध्ययन भी 'ग्रेज इन' में शुरू किया। अध्ययन की सार्थकता पाठ्यपुस्तक तक ही करके वे नहीं रुके। उन्होंने अपनी दृष्टि उस लंदन म्यूजियम की ओर मोड़ दी जहां अध्यात्म और विज्ञान संबंधी विचारों का संग्रह है, जहां विश्व के प्राचीन इतिहास और परिवर्तन के अवशेष-संग्रहीत हैं और जहां कार्ल मार्क्स, मैजिनी, लेनिन और वीर सावरकर जैसी हस्तियों ने ज्ञान का रसास्वादन किया था। पर्याप्त पैसा न होने से उन्हें अपना विद्याध्ययन नियत समय में पूरा करना था। पेट काटकर जितने ग्रंथ खरीदने संभव थे, उतने अम्बेडकर खरीद लेते थे। यात्रा के लिए कोई खर्च न करते हुए वे ग्रंथालय से दुर्लभ ग्रंथ प्राप्त करने के लिए अनेक मील पैदल दौड़ते रहते थे। उनकी दिनचर्या मानो कड़ी तपस्या ही थी। जिस स्त्री के यहां वे रहते थे वह बड़ी कंजूस थी। सुबह नाश्ते के समय चाय, ब्रेड का एक टुकड़ा और उस टुकड़े के छोर को बिलकुल थोड़ा-सा मुरंबा लगाकर वह देती थी।[12]

वह अधूरा खाना खाकर अम्बेडकर सुबह म्यूजियम में पढ़ने के लिए जाते थे। पाठक के रूप में सबसे पहले प्राय: उनका ही प्रवेश होता था। दोपहर का खाना खाने के लिए उनके पास पैसे नहीं थे। अपने साथ लिए हुए सैंडविच के दो टुकड़े वे वहां बहुत धीरे खाते थे। लेकिन एक दिन म्यूजियम के नौकर ने नियम की ओर अंगुली-निर्देश करते ही उन्होंने वहां ब्रेड के टुकड़े खाना छोड़ दिया। वे वहां पेट की भूख मारकर पांच बजे तक पढ़ाई करते थे। पैसे और समय की बचत होती थी। टिप्पणियों के नोटबुकों से उनकी जेबे भरी हुई रहती थी। सूरत पसीने से नहाई हुई, शरीर थका लेकिन आंखे तरोताजा, इस हालत में अम्बेडकर ग्रंथालय से सबसे अंत में बाहर निकलते थे। घर वापस लौटने पर कुछ समय वे घूमा करते थे। बाद में रात का खाना खाते थे। वह ख़ाना ही क्या था; एक प्याला मांस का रसा और साथ में एक-दो बिस्कुट। पुनश्च पढ़ने का दूसरा दौर शुरू होता था। रात के दस बजे उन्हें जमकर भूख लगती थी। भूख तेज हो जाती थी। उनके एक गुजराती मित्र ने उन्हें पापड़ की एक छोटी टोकरी दी थी। उसमें से चार पापड़ टीन पर भुनकर वे मध्यरात्रि में खाते थे और एक कप दूध पीते थे। फिर पौ फटने तक उनका अध्ययन जारी रहता था। उन्हें बाहरी विश्व की सुधबुध नहीं रहती थी। असनाड़ेकर नामक बम्बई के एक आदमी उसी कमरे में रहते थे। वे उत्तररात्रि के बाद जागृत होकर अम्बेडकर से बड़ी हमदर्दी से कहते थे, 'अम्बेडकर, रात बहुत हुई, कितना जागते हो हर रोज! अब आराम करो। सो जाओ।' इस पर अम्बेडकर धीरे से कहते थे, 'असनाड़ेकर, मेरे पास खाना खाने के लिए न पैसा है और सोने के लिए न समय। मुझे अपना पाठ्यक्रम यथाशीघ्र पूरा करना है सो मैं जागूं नहीं तो क्या करूं? उन्हें लगता था, जिन्दगी छोटी है, विद्या बड़ी। इसलिए लोहे के चने चबाकर अपना अध्ययन पूरा करने के लिए वे रात-दिन प्रयास करते थे। रात-दिन एक कर देते थे। यह ज्ञानोपासना बहुत कड़ी थी। इसलिए उन्हें अथक परिश्रम करना पड़ता था। निरन्तर तपस्या थी वह। ज्ञानयज्ञ तो और दूसरा कौन-सा होगा? 'विद्यातुराणां न सुखं न निद्रा' सुवचन का प्रत्यक्ष उनकी जिन्दगी में बड़ी प्रगल्भता से दिखाई पड़ता है।

अपने मित्र नवल भथेना के पास अम्बेडकर बीच-बीच में पैसे की मांग करते थे। एक बार बहुत भावावेश में आकर अम्बेडकर ने भथेना को लिखा, 'मेरी वजह से तुम्हें जो तकलीफ होती है, इसका मुझे बड़ा अफसोस है। तुम इस पर भरोसा रखो। बहुत घनिष्ठ मित्र को भी इस प्रकार के कष्ट सहना कठिन है, जो मेरी वजह से तुम्हें सहने पड़ते हैं—इसका मुझे एहसास

है। किसी न किसी कारण मेरा तकाज़ा तुम्हारे पीछे हमेशा रहता है। फिर भी मुझे विश्वास है, तुम मेरे इकलौते मित्र मुझसे वंचित नहीं होगे।' जर्मन मुद्रा का भाव बढ़ने की संभावना थी, इसलिए उसके पहले हुंडी लेने के उद्देश्य से उन्होंने भथेना के पास 2000 रूपए की मांग की।

अमरीका के अध्यक्ष बेंजामिन फ्रेंकलिन कहते थे कि, 'जीवन में सफलता दो बातों पर निर्भर करती है—निरन्तर श्रम और मितव्ययपूर्ण रहन सहन। लंदन में अम्बेडकर इतनी मितव्ययिता से रहते थे कि उनका मासिक व्यय 8 पौंड से ज्यादा नहीं होता था। फिर भी उनकी तबीयत बिगड़ गयी थी। लेकिन उस संबंध में अपनी पत्नी के पास चूं तक न करे, इसलिए शिवतरकर को पत्र द्वारा हिदायत दी थी। प्रेक्षणीय स्थान, उपहारगृह, नाटकगृह, सिनेमागृह आदि से वे पूरी तरह से अलिप्त थे। अपने व्यक्तित्व की और भवितव्यता की अभेद्य नींव पराक्रमी व्यक्ति कैसे डालता है; कठिनाइयों से उसके अंगभूत गुण कैसे प्रकट होते हैं, इसका एक बड़ा श्लाघनीय उदाहरण अम्बेडकर की जिन्दगी थी। ऐसे उदाहरण इतिहास में थोड़े ही दिखाई पड़ते हैं। निरन्तर परिश्रम करने का उत्साह, अपरिमित तकलीफ सहने की शक्ति और उच्च विचारों की वजह से ही विश्व के महानुभावों के जीवन में सफलता प्राप्त होती है।

यह दिखाई देता है कि उन्हीं दिनों अम्बेडकर पर एक अंग्रेज स्त्री की विशेष अनुरक्ति हो गयी थी। उसके घर में वे बाइबिल का अध्ययन करते थे। जिसके जीवन में स्त्रियां आकर्षित नहीं होती ऐसा महानुभाव विरल ही होगा। अम्बेडकर का विश्राम लेने का और एक स्थल था। उस समय लंदन के उपनगर में स्थित एक भारतीय संस्कृत शास्त्री जी के यहां अम्बेडकर जाते थे। उनकी पत्नी सुशील, धर्मनिष्ठ और मिलनसार थी। वह अम्बेडकर को हर इतवार को या पखवाड़े में एक बार सानुग्रह बहन के रूप में भोज के लिए निमंत्रित करती थीं। वह उनका इंतजार करती रहती थी। वह उन्हें 'तू' कहकर पुकारती थी। अम्बेडकर ने अपने अस्पृश्य होने की बात उसे भय के कारण नहीं बतायी। वे कहते थे,[13] मैं कायर ठहरा। आगे उस महिला को जब अम्बेडकर की पूरी जानकारी प्राप्त हुई होगी तब उसे क्या लगा होगा, यह समझने के लिए कोई चारा नहीं। ऐसे व्यक्ति को भाई मानने से वह धन्य हुई होगी।

यद्यपि अम्बेडकर विदेश में थे तो भी भारत में अस्पृश्योद्धार के कार्य की ओर उनका ध्यान था। वे अपने मित्रों तथा सहयोगियों को वहां से पथप्रदर्शन करते थे। उनके उपदेश का मुख्य सूत्र था—'एकता में जय और द्वयता में क्षय।' उस समय अम्बेडकर अपने सहयोगियों और मित्रों की प्रगति, उन्नति, सुख-दु:ख के बारे में आस्था से पूछताछ करते थे।

यद्यपि अम्बेडकर विदेश में थे तो भी भारत में अस्पृश्योद्धार के कार्य की ओर उनका ध्यान था। वे अपने मित्रों तथा सहयोगियों को वहां से पथप्रदर्शन करते थे। उनके उपदेश का मुख्य सूत्र था—'एकता में जय और द्वयता में क्षय।' उस समय अम्बेडकर अपने सहयोगियों और मित्रों की प्रगति, उन्नति, सुख-दु:ख के बारे में आस्था से पूछताछ करते थे। उदित होने वाला और अपना नेतृत्व मजबूत करने के लिए जागृत रहने वाला प्रत्येक नेता उसी तरह बर्ताव करता है। अपने बेटे और भतीजे की शिक्षा की ओर ध्यान देने के लिए वे सीतारामपंत शिवतरकर को बड़ी लगन से पत्र लिखकर विनती करते थे। उन दिनों वे गड़करी के नाटक मंगवाकर पढ़ते थे। मैककुलॉ विरचित विकार्डो की ग्रंथसंपदा-यह दुर्लभ ग्रंथ उन्हें चाहिए था। वह ग्रंथ बम्बई की पुरानी किताबों की दुकान में था। वह ग्रंथ किस तरकीब से उस दुकान से उपलब्ध हो सकता है, इसके बारे में उन्होंने शिवतरकर को पत्र लिखा।

भारत की राजनीति पर अम्बेडकर की निगाह थी। उनके लंदन पहुंचने पर लोकमान्य तिलक का निधन हुआ। तिलक युग समाप्त हुआ और गांधीयुग शुरू हुआ। आगे अम्बेडकर ने इसी गांधीयुग का वर्णन भारत के तमोयुग के रूप में किया है। राष्ट्रीय सभा ने तिलक फंड इकट्ठा किया। अस्पृश्यता निवारण उस फंड के उद्देश्यों में से एक प्रमुख उद्देश्य था। राष्ट्रीय सभा की कार्यकारिणी समिति ने यह फैसला किया कि अस्पृश्यता निवारण का कार्य हिन्दू महासभा का है। उससे राष्ट्रीय सभा का कोई संबंध नहीं। इतना ही नहीं, उस कार्य के लिए पैसा देने से भी राष्ट्रीय सभा की कार्यकारिणी समिति ने इनकार किया। अस्पृश्य समाज के हित की दृष्टि से अम्बेडकर ने भारत मंत्री मांटेग्यू और लंदन में रह रहे विट्ठलभाई पटेल से भेंट की। अस्पृश्यों की शिकायतें उन्हें बता दीं। दलितों के हित की दृष्टि से उनके साथ चर्चा की।

मांटेग्यू के साथ हुई चर्चा के बारे में अम्बेडकर ने दिनांक 3 फरवरी 1921 के पत्र में साहू छत्रपति को लिखा कि, ''मांटेग्यू भारत के नरम दल के लोगों की सूचना के अनुसार बर्ताव करता है। तथापि मुझे विश्वास है कि अब वह ब्राह्मणेतर आंदोलन के बारे में तिरस्कार से नहीं बोलेगा। सच तो यह है कि ब्राह्मणेतर आंदोलन जानने की यहां कोई परवाह ही

नहीं करता। अब सुधार-विधेयक बन रहा था, उस महत्वपूर्ण समय में ब्राह्मणेतर आंदोलन का महत्व समझा देने वाला कोई ठोस प्रतिपादक यहां नहीं था। यह अफसोस की बात है। इसलिए ब्राह्मणेतर आंदोलन के शत्रुओं ने उस आंदोलन को केवल ब्राह्मण विरोधी आंदोलन का स्वरूप बड़ी चालाकी से दे दिया। उस आंदोलन के लोकतंत्र निष्ठ रुख पर दबाव डालकर उसका विपर्यास किया गया और वही विपर्यस्त स्वरूप साधारण अंग्रेज लोगों के मन में अब घर कर बैठा है। अब राजनीतिक सुधारों का मसौदा पक्का हो जाने से हिन्दुस्तान में सम्प्रति कितने भेदाभेद हैं, यह जानने की तकलीफ कोई नहीं लेता। फिर भी भविष्य के लिए अब से ही तैयारी करने की जरूरत है। इसलिए जब मौका प्राप्त होता है तब मैं हर एक प्रतिष्ठित अंग्रेज व्यक्ति को इसकी उचित कल्पना देता रहता हूं कि हिन्दुस्तान की सामाजिक और राजनीतिक समस्याएं एक-दूसरे में कैसी जुड़ी हैं। मेरे ये प्रयास घटना होने के बाद के हैं। इसलिए उसके परिणाम तुरन्त नहीं दिखाई पड़ेंगे। फिर भी वे विफल हुए या सफल समय ही बतायेगा।

''आपके मार्गदर्शन के अनुसार यहां कोई संस्था स्थापित करना मुमकिन होगा या नहीं। मैंने इस संबंध में यहां के कुछ प्रतिष्ठित व्यक्तियों के साथ चर्चा की। उन्होंने सर्व-सम्मति से मेरी इस कल्पना का स्वागत किया। तथापि उनके मतानुसार वैतनिक कार्यवाहक के बिना इस प्रकार की संस्था टिक नहीं सकती। इसका मतलब यह कि कम से कम पांच सौ पौंड सालाना व्यय होगा। इस तरह की संस्था अस्पृश्य वर्ग की दृष्टि से हितकारी होगी। लेकिन मेरा विश्वास है कि वह व्यय उनकी शक्ति के बाहर का होगा।

''सुनकर आपको प्रसन्नता होगी कि भारत मंत्री मांटेग्यू ने मुझे फिर से मिलने के लिए बुलाया है। उन्होंने यह आग्रह किया कि बम्बई विधान मंडल के सदस्य के रूप में मैं हिन्दुस्तान वापस लौटूं। मुझे ऐसा लगता है कि उन्होंने मेरी पहली मुलाकात के बाद हिन्दुस्तान के महाराज्यपाल और बम्बई के राज्यपाल को यह तार किया होगा कि मेरी नियुक्ति बम्बई विधान मंडल के सदस्य के रूप में की जाए। मैंने उनसे कहा कि मैं अपनी वैयक्तिक शिकायतें बताने के लिए आपके पास नहीं आया हूं; एक समस्या आपके सामने प्रस्तुत करने के लिए उनके एक प्रतिनिधि के रूप में आया हूं। उनका यह कहना था कि प्रथमत: मैं

राजनीतिक सुधारों का मसौदा पक्का हो जाने से हिन्दुस्तान में सम्प्रति कितने भेदाभेद हैं, यह जानने की तकलीफ कोई नहीं लेता। फिर भी भविष्य के लिए अब से ही तैयारी करने की जरूरत है। इसलिए जब मौका प्राप्त होता है तब मैं हर एक प्रतिष्ठित अंग्रेज व्यक्ति को इसकी उचित कल्पना देता रहता हूं कि हिन्दुस्तान की सामाजिक और राजनीतिक समस्याएं एक-दूसरे में कैसी जुड़ी हैं। मेरे ये प्रयास घटना होने के बाद के हैं।

अस्पृश्यों को ज्यादा प्रतिनिधित्व दिलाने के लिए महाराज्यपाल और राज्यपाल के साथ भारत जाकर चर्चा करूं। वे यह आश्वासन देने के लिए तैयार थे कि मैंने उनके साथ वैसी चर्चा किए बिना वह समस्या हल हुई है, यह हम नहीं मानेंगे। अर्थात् यह बात मुझे मोहित करने जैसी थी। तथापि विधान मंडल की जगह के लिए अपना विद्याध्ययन अधूरा छोड़कर जाना मुझे अच्छा नहीं लगा। मुझे वैयक्तिक कीर्ति का आकर्षण नहीं है। और यद्यपि मैंने अपने लोगों की सेवा करने का यह मौका छोड़ दिया तो भी महाराज के ध्यान में आ जाएगा कि मुझे अधिक बड़ी सेवा करना सुलभ हो इसलिए मैं अधिक अच्छी सिद्धता कर रहा हूं।''

''मैं तुरन्त ही मजदूर दल के साथ संपर्क स्थापित कर रहा हूं और उनसे साफ बातें करने वाला हूं। क्या मैं यह सूचित करूं, हिन्दुस्तान के दौरे पर निदाले वेजवुड़ और स्फूर से महाराज मिले। कुछ भी हो वे लंदन वापस लौटने पर मैं उनके साथ बातचीत जरूर करूंगा। उस प्रयास से अगर कुछ फलित प्राप्त होगा तो मैं उसकी जानकारी आपको दूंगा।''

''पुनश्च, 'लंदन टाइम्स' के संपादक के साथ मेरी दोस्ती हो गयी है। अस्पृश्यों की शिक्षा के बारे में एक लेख का कतरन इस लेख के साथ भेज रहा हूं। वह लेख लिखने के लिए मैंने उस संपादक को विवश किया था।''

1919 के कानून के अनुसार राजकीय मानचित्र में अस्पृश्यता का प्रथमत: उल्लेख होकर उन्हें प्रान्तीय विधान मंडल में प्रतिनिधित्व प्राप्त हुआ। केन्द्रीय विधान मंडल के सरकार नियुक्त चौदह सदस्यों में से एक अस्पृश्य वर्ग का प्रतिनिधि; मध्य प्रान्त के विधान मंडलों में चार प्रतिनधि, बम्बई प्रान्त के विधान मंडल में दो, बंगाल और उत्तर प्रदेश में एक-एक, मद्रास में नौ; इस तरह प्रतिनिधित्व अस्पृश्यों को प्राप्त हुआ।

लंदन विश्वविद्यालय में अम्बेडकर का अध्ययन अब समाप्त हो रहा था। 'प्रोविन्शल डिसेंट्रलाइजेशन ऑफ इंपीरियल फायनान्स इन ब्रिटिश इंडिया' विषय लेकर 1921 के जून में वे एम.एस.सी. परीक्षा उत्तीर्ण हुए।

4 सितम्बर 1921 में अम्बेडकर ने

साहू छत्रपति को एक पत्र लिखकर 200 पौंड भेजने की विनती कीं। करंट-चलन का भाव गिरने से वहां उन्हें पैसे की कमी महसूस हुई। राजर्षि साहू को उन्होंने आश्वासन दिया कि हिन्दुस्तान वापस लौटने पर ब्याज सहित रकम लौटा दूंगा। श्री दलवी के कहने से मैं यह विनती कर रहा हूं और वह अनुचित नहीं होगी यह आशा उन्होंने उस पत्र में व्यक्त की थी। महाराज की तबीयत ठीक होगी ऐसी आशा व्यक्त कर अपने पत्र के अन्त में वे लिखते हैं-'हमें आपकी बहुत जरूरत है; क्योंकि हिन्दुस्तान में जो बड़ा आंदोलन सामाजिक लोकतंत्र की दिशा में प्रगति कर रहा है, उसके आधारस्तंभ आप ही हैं।'

अम्बेडकर ने 'डॉक्टर ऑफ साइन्स' उपाधि के लिए लिखा हुआ 'रूपये की समस्या' (द प्रॉब्लेम ऑफ रूपी) प्रबंध लन्दन विश्वविद्यालय को 1922 की प्रथम तिमाही में प्रस्तुत किया। उसी समय अम्बेडकर बैरिस्टरी की परीक्षा उत्तीर्ण हुए। उपर्युक्त प्रबंध लिखने में व्यस्त होने की वजह से बैरिस्टरी की परीक्षा के लिए उन्हें उससे पहले बैठना संभव नहीं हुआ। इसके अतिरिक्त उन्हें मित्रों से मिलने वाली कानून की किताबें समय पर प्राप्त नहीं हुईं।

इसी समय छत्रपति साहू का बम्बई में 6 मई, 1922 को निधन हुआ। सारा महाराष्ट्र दुःख से व्याकुल हो गया। अम्बेडकर भी शोकाकुल हुए। 10 मई, 1922 को राजाराम महाराज को लिखे हुए अपने पत्र में वे कहते हैं: 'महाराज के निधन की वार्ता अंग्रेजी समाचारपत्रों में पढ़ी और मुझे सदमा पहुंचा। इस दुःखद घटना से मुझे दोतरफा दुःख हुआ। उनके निधन से मैं अपने एक खास मित्र से वंचित हुआ हूं। अस्पृश्य वर्ग तो अपने एक बड़े हितकर्ता से वंचित हुआ है। उनके कार्य का सबसे महान हिमायती कालवश हुआ है। मैं दुःख से व्याकुल होकर आपके और विधवा महारानी के दुःखद समय में तहेदिल से अपनी हमदर्दी व्यक्त कर रहा हूं।''

बीच में यूरोप के दूसरे विख्यात विश्वविद्यालय में अध्ययन करने का डॉ. अम्बेडकर का विचार था। तुरन्त ही वे बॉन विश्वविद्यालय में प्रवेश प्राप्त करने के लिए मई 1922 में बॉन गए थे। अपना प्रबंध लंदन विश्वविद्यालय को प्रस्तुत करके वे वहां अध्ययन करने के लिए गए। लेकिन उनके प्रोफेसर एडविन कैनन ने उन्हें लंदन वापस बुला लिया। अंग्रेज अध्यापकों ने प्रबंध का तीखापन कम करने की उन्हें सलाह दी। ब्रिटिश प्राध्यापकों की राष्ट्रीय भावना को चुभने वाला निष्कर्ष अम्बेडकर ने निकाला था। अध्यापक महोदय ने अम्बेडकर को यह सलाह दी थी कि विषय का आशय, केन्द्रीय भाव, ऐतिहासिक जानकारी उसी रूप में रखकर उसके स्वरूप में कुछ परिवर्तन किया जाय। अम्बेडकर ने वह सलाह बड़े दुःख से स्वीकार की। ब्रिटिशों के दिल को सदमा पहुंचाने वाली यह उनकी पहली बारी नहीं थी। इसके पहले उन्होंने लंदन विश्वविद्यालय के विद्यार्थी संघ के सामने 'जिम्मेदार सरकार का दायित्व' विषय पर एक निबन्ध पढ़ा था। इस निबन्ध में जो कड़े और चुभने वाले विधान थे और विचारधारा थी उन्हें सुनकर उस विश्वविद्यालय का माहौल कुछ गर्म हो गया था। उस समय 'लंदन स्कूल ऑफ इकॉनॉमिक्स' में काम करने वाले प्रोफेसर हैरॉल्ड लास्की को भी उस निबन्ध में प्रस्फुटित विचार बहुत तीखे लगे। अंग्रेज खुफिया आरक्षकों के मन में जो संदेह निर्माण हुआ था कि अम्बेडकर भारत के क्रांतिकारी गुट के या मत के होंगे; वह इसी कारण दुगुना हो गया। लालाजी के साथ उनका अमरीका में संपर्क हुआ था। इसलिए अम्बेडकर का नाम क्रांतिकारियों की सूची में दर्ज हो गया था।

तथापि अपने प्रबन्ध में सुधार करने के लिए उनके पास समय नहीं था। उनके घर की हालत बिगड़ गयी थी। वहां विपन्नावस्था की तीव्रता बढ़ गयी थी। तकलीफें भोगकर जो कुछ बचत हुई थी। वह ग्रंथ खरीदने में उन्होंने व्यय की। इस निराश वातावरण में 14 अप्रैल 1923 को वे भारत वापस लौटे। उन्होंने प्रबन्ध का काम हाथ में लिया। तीन-चार महीनों के अध्यवसाय से आवश्यक परिवर्तन कर तुरन्त वह प्रबन्ध लंदन विश्वविद्यालय को भेज दिया। वह प्रबंध 1923 के अन्त में स्वीकृत हुआ। अम्बेडकर को लंदन विश्वविद्यालय ने 'डॉक्टर ऑफ साइन्स' की उपाधि 1923 के अन्त में प्रदान की। निरन्तर उद्यमशीलता, अटल निर्धार, दुर्दम्य आशावाद की विजय हुई। 'तपसा प्राप्यते यशः' वचन फिर एक बार सार्थक हुआ। रमाबाई आनंद से फूली नहीं समायी। उनकी प्रार्थना कामयाब हुई। उन्हें लगा, 'अच्छा हुआ! समाप्त हुआ

छत्रपति साहू का बम्बई में 6 मई, 1922 को निधन हुआ। सारा महाराष्ट्र दुःख से व्याकुल हो गया। अम्बेडकर भी शोकाकुल हुए। 10 मई, 1922 को राजाराम महाराज को लिखे हुए अपने पत्र में वे कहते हैं: 'महाराज के निधन की वार्ता अंग्रेजी समाचारपत्रों में पढ़ी और मुझे सदमा पहुंचा। इस दुःखद घटना से मुझे दोतरफा दुःख हुआ।

अध्ययन! अब साहब परिवार के लिए मुक्त हुए!' द प्रॉब्लेम ऑफ द रूपी' प्रबन्ध का संशोधित परिवर्धित संस्करण इंग्लैंड के आर.एस. किंग एण्ड सन्स, लिमिटेड कंपनी ने दिसम्बर, 1923 में प्रकाशित किया। अम्बेडकर ने वह ग्रंथ उनकी शिक्षा के लिए जिन्होंने मुसीबतें झेलीं और शिक्षा का मार्ग प्रशस्त किया उन माता-पिता को कृतज्ञता से समर्पित किया है। ग्रंथ की प्रस्तावना में अध्यापक एडविन कैनन कहते हैं, 'अम्बेडकर की अधिकांश समीक्षा ग्राह्य न लगने पर भी कुछ बातों में उन्होंने रहस्य जानकर अपने बेजोड़ विचार व्यक्त किए हैं, अपने शिष्य के विचार और बुद्धिवाद में उत्तेजना देने वाली नवीनता के लिए उस विख्यात अर्थवेत्ता ने अपने शिष्य को शाबाशी दी है। प्रस्तुत ग्रंथ में ब्रिटिश राज्यकर्ताओं ने रूपए की मात्रा पौंड के साथ ब्रिटिश व्यापारियों के हित की दृष्टि से कैसी सुविधाजनक बिठायी थी और भारतीय लोगों की कैसी अपरिमित हानि की थी, उस पर वित्तवेत्ता डॉ. अम्बेडकर ने विदारक प्रकाश डाला है।

डॉ. अम्बेडकर अब एक बुद्धिमान और शक्तिशाली व्यक्ति बन गए थे। तीन विश्वविद्यालयों में उन्होंने ज्ञान प्राप्ति के लिए तपस्या की। अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र, मानवशास्त्र, धर्मशास्त्र, विधिशास्त्र, इतिहास का संभार उन्होंने अपनी पीठ पर बांध रखा था। पंडितों, कूटराजनीतिज्ञों और अर्थवेत्ताओं को चुनौती देने वाले पांडित्य का पाशुपत अस्त्र अर्जुन की भांति कड़ी तपस्या से प्राप्त कर वे अब भावी संग्राम के लिए तैयार हुए।

डॉ. अम्बेडकर अब एक बुद्धिमान और शक्तिशाली व्यक्ति बन गए थे। तीन विश्वविद्यालयों में उन्होंने ज्ञान प्राप्ति के लिए तपस्या की। अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र, मानवशास्त्र, धर्मशास्त्र, विधिशास्त्र, इतिहास का संभार उन्होंने अपनी पीठ पर बांध रखा था। पंडितों, कूट राजनीतिज्ञों और अर्थवेत्ताओं को चुनौती देने वाले पांडित्य का पाशुपत अस्त्र अर्जुन की भांति कड़ी तपस्या से प्राप्त कर वे अब भावी संग्राम के लिए तैयार हुए।

संदर्भ

1. खैरमोडे, चां.भ., डॉ. भीमराव रामजी अम्बेडकर, पृ. 66-67
2. The Indian Antiquary, May 1917.
3. अम्बेडकरांचे भाषण, जनता, 23 मई 1936
4. The Evolution of Provincial Finance in British India, P. 297.
5. The All India Anti-Untouchability Movement, P. 22
6. महाराष्ट्रीय ज्ञानकोश, विभाग 7 वां, पृ. 647
7. The Journal of the Indian Economics Society, Vol. I, No. III
8. The Times of India, 16 January, 1919
9. बहिष्कृत भारत, मई 20, 1927
10. शिवतरकर, सी.ना., जनता-खास-अंक, अप्रैल 1933
11. शिवतरकर, सी.ना., जनता-खास-अंक, अप्रैल 1933
12. पाध्ये, प्रभाकर, प्रकाशातील व्यक्ती, पृ. 30
13. देवराव नाईक, आठवण

अध्याय 4
जीवित कार्य का श्रीगणेश

'पहले विचार बाद में संचार' उक्ति के अनुसार बर्ताव करने का समय नजदीक आ गया। 'अभ्यासे प्रकट व्हावे। नाही तरी झोकोनि असावे।' सुवचन के अनुसार कार्य आरंभ करने की शुभ घड़ी आ गयी। कर्तव्य करने की दिशाएं फैल रही थी। पौ फटने से पहले का अंधेरा खत्म हुआ था। आजीविका के एक साधन के रूप में वकालत करना और उस व्यवसाय के कारण प्राप्त प्रतिष्ठा, समय और मौके का अधिकाधिक उपयोग अस्पृश्यता-निर्मूलन के लिए करना – अम्बेडकर ने अपना ध्येय-उसूल बनाया था। सनद लेने के लिए उनके पास पैसे नहीं थे। उनके मित्र नवल भथेना ने उनकी वह कठिनाई दूर की। अम्बेडकर ने सनद लेकर जुलाई, 1923 के महीने में बैरिस्टरी के व्यवसाय में प्रवेश किया।

यह सच है कि वे बम्बई के उच्च न्यायालय में काम करने के लिए जाने लगे। लेकिन उस व्यवसाय के कर्तृत्व की नींव सोलिसिटर से मिलने वाले सहयोग पर ही ज्यादा निर्भर थी। उस समय मुख्यतया विदेशी सरकार के जाति-भाइयों के न्यायाधीश होने से यूरोपीय लोगों को ही गरजमंद लोग अपना वकालत-पत्र दे देते थे। उस समय बुद्धि की अपेक्षा कभी-कभी चमड़ी का रंग ही ज्यादा चमकता था।

अस्पृश्यता का कलंक, समाज में निकृष्ट दर्जा, व्यवसाय का नौसिखियापन, इर्द-गिर्द के असहयोगी वातावरण की वजह से उनका व्यवसाय एक कठिन मार्ग सिद्ध हुआ। लेकिन उन्होंने अपना धैर्य कम नहीं होने दिया। इस कठिन परिस्थिति को ध्यान में रखकर ही डॉ. अम्बेडकर उपनगर और जिले के न्यायालय में जो भी काम मिले, उसे करते थे। यह सर्वविदित है कि बहुधा सभी प्रथितयश विधिवेत्ता प्रारम्भ में मक्खियां मारते बैठे रहते हैं। लगन से निरन्तर कठिन परिश्रम करना ही व्यवसाय की प्रवीणता और सफलता की

कुंजी है। यह विद्यार्थी जीवन से उनका अनुभव था। इस क्षेत्र में भी सफलता और कीर्ति प्राप्त करने का उन्होंने निश्चय किया। इतना ही नहीं, इस संबंध में बोलते समय वे कहते थे, 'मैं उच्च न्यायालय के न्यायाधीश का पद भी प्राप्त करूंगा।'

ऐसा दिखाई देने लगा था कि प्रथम विश्वयुद्ध के पश्चात् बाहरी दुनिया के राजनीतिक और सामाजिक विचार-प्रवाह तथा आन्तरिक खलबली का अस्पृश्यों के दिल और दिमाग पर असर पड़ने लगा था। शिक्षा प्रसार, यातायात के साधनों की वृद्धि, यात्रा की पद्धतियां और राष्ट्रीय भावना की अभिवृद्धि का अनुकूल प्रवाह धीरे-धीरे उनके जीवन पर असर डालने लगा था। कपड़े के व्यवसाय की तेजी से प्रथम विश्वयुद्ध के समय सर्वसाधरण मजदूर वर्ग की स्थिति में थोड़ा-बहुत सुधार हुआ। साथ ही अस्पृश्यों की स्थिति में भी अल्प-सा सुधार हुआ था। प्रथम विश्वयुद्ध के उत्तर-काल से जनतंत्र के वृक्ष के पत्तों की जो मरमर ध्वनि विभिन्न देशों में गूंज उठी थी, उसकी वजह से समाज सुधार आंदोलन को बड़ी गति प्राप्त हुई। अस्पृश्यता-विषयक जागृति का यह एक महत्वपूर्ण कारण है। जब किसी मृतप्राय समाज का उद्धार होने का समय नज़दीक आता है, तब उस समाज में आत्मप्रत्यय और आत्मोन्नति की हलचल शुरू होती है। ऐसा होने पर यह समझना चाहिए कि उनके उद्धार का अरुणोदय हुआ है। समाज सुधार के तत्वों का सार यह है कि उपकारकर्ता की उदारता से पैदा हुआ सुधार सच्चा सुधार नही है। जब कोई समाज खुद ही विचार-स्वतंत्रता और अधिकार-प्राप्ति का हठ पकड़ लेता है, तब उसका सही रूप में सुधार होता है।

बम्बई के नये विधान परिषद् के कदम अस्पृश्यों के सुधार के मार्ग पर धीरे-धीरे बढ़ रहे थे। उस विधान परिषद् के अस्पृश्यों के सर्वप्रथम प्रतिनिधि ज्ञानदेव ध्रुवनाथ घोलप थे। उन्होंने अस्पृश्यों की शिकायतें सरकार के सम्मुख रखकर लगातार प्रश्नों की वर्षा की। आनंदराव सुर्वे नामक भंडारी जाति के सदस्य को ठाणे जिले में अस्पृश्यों को सार्वजनिक सवारी में नहीं लिया जाता, यह सत्य है अथवा नहीं, इस संबंध में प्रश्न पूछे! लेकिन इन सब में बड़ा क्रांतिकारी प्रस्ताव समाज सुधारक राव बहादुर सीताराम केशव बोले ने 4 अगस्त, 1923 को विधान परिषद् में प्रस्तुत किया। उनके प्रस्ताव का आशय यह था कि सार्वजनिक पनघट, सराय, विद्यालय, न्यायालय आदि स्थल अस्पृश्यों के लिए खुले रहें। बोले एक सेवाभावी, विवेकी स्वभाव के नेता थे। सुधारमतवादी होने से उन्होंने एक बार आर्य समाज के सहभोज में भाग लिया। तुरन्त ही उनकी जाति के दकियानूसी कार्यकर्ताओं ने उन्हें अपनी जाति से निष्कासित करने का षड्यंत्र रचा। भारत के विधान परिषद् की संस्थापना के बाद इस अभूतपूर्व क्रांतिकारी प्रस्ताव को प्रस्तुत करते समय बोले ने बड़ी लगन से कहा-'अस्पृश्यता हमारी मातृभूमि के पवित्र नाम को लगा हुआ बड़ा कलंक है। अफ्रीका में निवास करने वाले भारतीय लोगों के साथ अस्पृश्यों के समान बर्ताव किया जाता है, यह देखकर हम उस रुख का निषेध करते है। क्या अपने घर में भी यही घटित नहीं होता? देश के हित की दृष्टि से अगर हम अस्पृश्यों के साथ समानता का बर्ताव करें तो देश का हित होगा।' इतना बोलकर ही बोले नहीं रुके। उन्होंने इस धोखे की सूचना भी सरकार को दी कि खुद की उन्नति करने के लिए अस्पृश्य समाज को अगर विधान परिषद् ने मौका नहीं दिया तो वे सत्याग्रह करेंगे। रावबहादुर बोले ने यह प्रस्ताव प्रस्तुत करने के देश की सामाजिक समता के महान् परिवर्तन को गति देकर एक बड़ा कार्य किया।

प्रथम विश्वयुद्ध के उत्तर-काल से जनतंत्र के वृक्ष के पत्तों की जो मरमर ध्वनि विभिन्न देशों में गूंज उठी थी, उसकी वजह से समाज सुधार आंदोलन को बड़ी गति प्राप्त हुई। अस्पृश्यता-विषयक जागृति का यह एक महत्वपूर्ण कारण है। जब किसी मृतप्राय समाज का उद्धार होने का समय नज़दीक आता है, तब उस समाज में आत्मप्रत्यय और आत्मोन्नति की हलचल शुरू होती है। ऐसा होने पर यह समझना चाहिए कि उनके उद्धार का अरुणोदय हुआ है। समाज सुधार के तत्वों का सार यह है कि उपकारकर्ता की उदारता से पैदा हुआ सुधार सच्चा सुधार नहीं है।

सी.के. बोले के इस कार्य के लिए बम्बई के अस्पृश्य कार्यकर्ताओं ने उनका कृतज्ञतापूर्वक जाहिर सत्कार कर, सत्कार्य प्रदीप बोले को एक स्वर्ण पदक अर्पित किया। ■

(पॉपुलर प्रकाशन द्वारा प्रकाशित धनंजय कीर की लिखी पुस्तक डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर जीवन चरित्र से साभार)

(शेष अगले अंक में)

सामाजिक न्याय

■दीपक कुमार

आज के दिन की बात वो पुरानी ही करेगा,
पुस्तैनी सियासतदारी इस ईमानदारी से करेगा।

खिलने के बाद मुरझाने की रवायतें खूब हो चुकी,
मौसम में तब्दीली कायनात इस अदाकारी से करेगा।

बे-वजह गुजार दी है जिसने तमाम उम्र,
अब क्या कोई वो फैसला जल्दबाजी से करेगा।

इक खास लिबास पहनने तक दुनिया को है भरम,
वो उनकी सिफारिश परवर दीगारी से करेगा।

जब भी बनाता है खिलौने, उसी मिट्टी के इक तरह,
वो क्यूं किसी की पैरोकारी मजहबदारी से करेगा।

काम आएगा हर तरफ, मेरी खुद्दारी का सामान,
वे खुद अपना काम, सितारों की मेहरबानी से करेगा।

जहनत को छुपाए रखना, होगा तेरा गुरूर,
जमाना तप्तीस हर बात की असरदारी से करेगा।

जब जानते हैं ऐतबार करना, वादे पर नहीं सही,
लेकिन तुझ पे भरोसा वो समझदारी से करेगा। ■

डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान

सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय, भारत सरकार

'बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर संपूर्ण वाङ्.मय'

Collected Works of Babasaheb Dr. B.R. Ambedkar (CWBA)

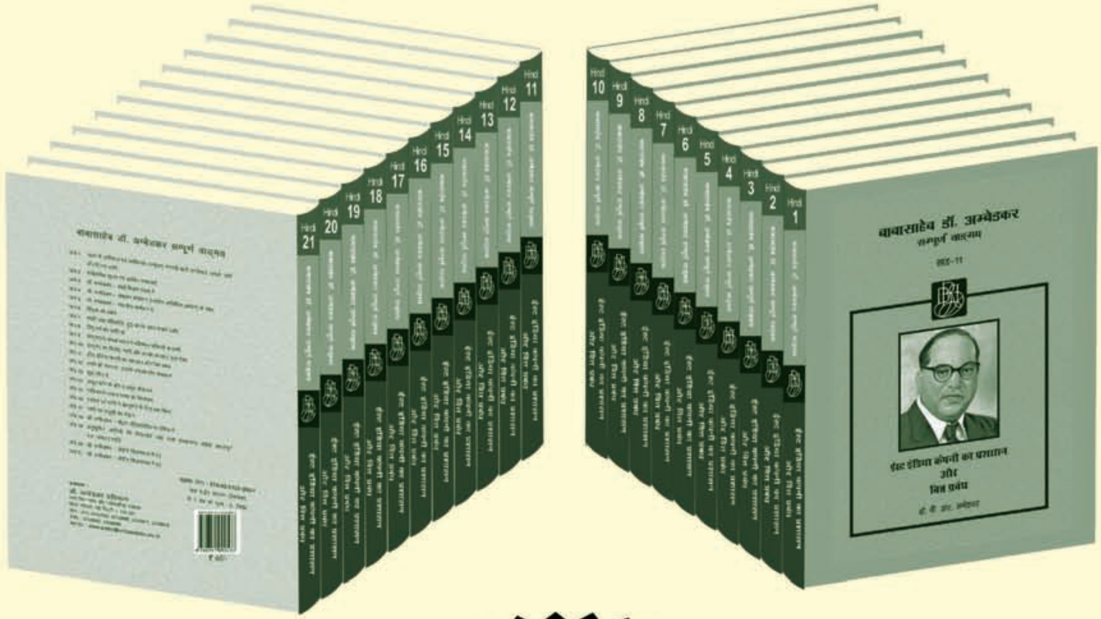

Offer Price

Rs. 671/-* Per set

(A Set of 21 Books)

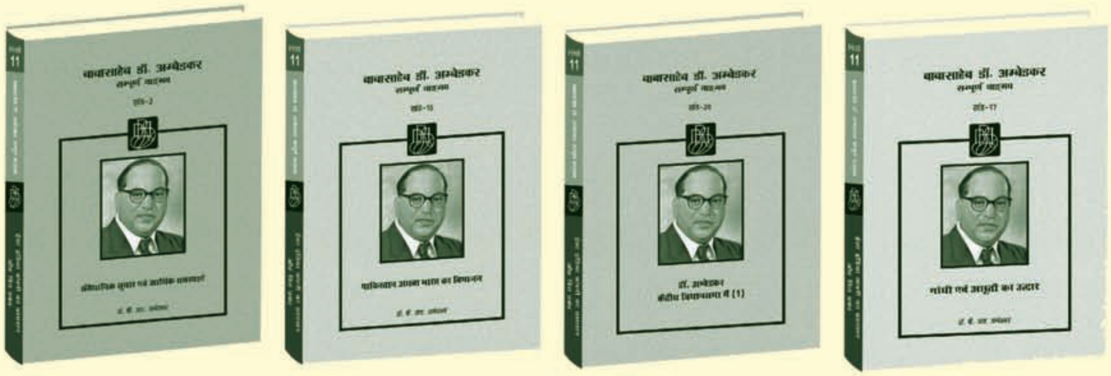

स्वयं पढ़े एवं दूसरों को पढ़ने के लिए प्रेरित करें।

15, जनपथ, नई दिल्ली-110001, फोन नं. 011-23357625, 23320589, 23320571, 23320576, फैक्स: 011-23320582

Website: www.ambedkarfoundation.nic.in

डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान
Dr. Ambedkar Foundation
सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय, भारत सरकार
Ministry of Social Justice & Empowerment, Government of India

15, जनपथ, नई दिल्ली-110001,
फोन नं. 011-23320588, 23320589, 23320571, 23320576,
फैक्स: 011-23320582
Website: www.ambedkarfoundation.nic.in

सामाजिक न्याय संदेश

समतावादी विचार का संवाहक

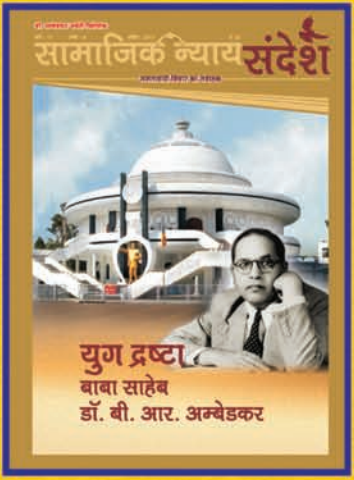

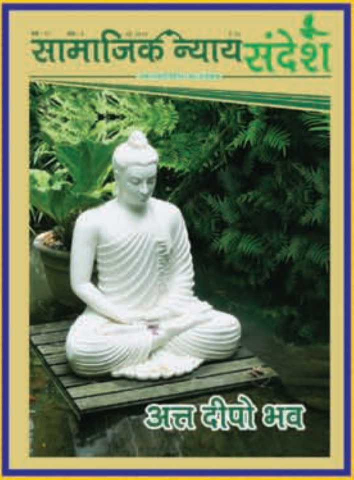

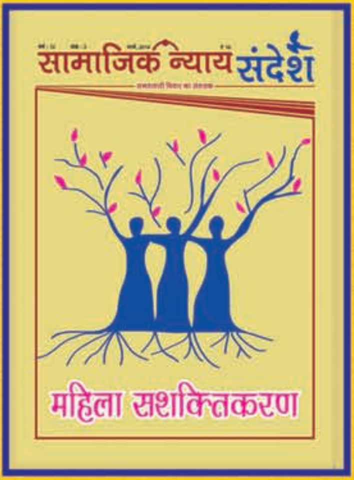

स्वयं पढ़े एवं दूसरों को पढ़ने के लिए प्रेरित करें।

15, जनपथ, नई दिल्ली-110001, फोन नं. 011-23320588, 23320589, 23320571, 23320576, फैक्स: 011-23320582
Website: www.ambedkarfoundation.nic.in

सामाजिक-आर्थिक व सांस्कृतिक सरोकारों की पत्रिका

सामाजिक न्याय संदेश

समतावादी विचार का संवाहक

डॉ. अम्बेडकर फाउन्डेशन द्वारा प्रकाशित सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक सरोकारों की पत्रिका *'सामाजिक न्याय संदेश'* का प्रकाशन जारी है। समता, स्वतंत्रता, बन्धुत्व एवं न्याय पर आधारित, सशक्त एवं समृद्ध समाज और राष्ट्र की संकल्पना को साकार करने के संदेश को आम नागरिकों तक पहुँचाने में सामाजिक न्याय संदेश की भूमिका बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। 'सामाजिक न्याय संदेश' देश के नागरिकों में मानवीय संवेदनशीलता, न्यायप्रियता तथा दूसरों के अधिकारों के प्रति सम्मान की भावना जगाने के लिए समर्पित है।

'सामाजिक न्याय संदेश' बाबा साहेब डॉ. अम्बेडकर के विचारों व उनके दर्शन तथा फाउन्डेशन के कार्यक्रमों एवं योजनाओं को आम नागरिकों तक पहुँचाने का काम बखूबी कर रहा है।

सामाजिक न्याय के कारवां को आगे बढ़ाने में इस पत्रिका से जुड़कर आप अपना योगदान दे सकते हैं। आज ही पाठक सदस्य बनिए, अपने मित्रों को भी सदस्य बनाईए, पाठक सदस्यता ग्रहण करने के लिए एक वर्ष के लिए रु. १००/-, दो वर्ष के लिए रु. १८०/-, तीन वर्ष के लिए रु. २५०/-, का डिमांड ड्राफ्ट, अथवा मनीऑर्डर जो **'डॉ. अम्बेडकर फाउन्डेशन'** के नाम देय हो, फाउन्डेशन के पते पर भेजें या फाउन्डेशन के कार्यालय में नकद जमा करें। चेक स्वीकार नहीं किए जाएंगे। पत्रिका को और बेहतर बनाने के लिए आपके अमूल्य सुझाव का भी हमेशा स्वागत रहेगा।

– सम्पादक

सामाजिक न्याय संदेश सदस्यता कूपन

मैं, डॉ. अम्बेडकर फाउन्डेशन द्वारा प्रकाशित मासिक पत्रिका 'सामाजिक न्याय संदेश' का ग्राहक बनना चाहता /चाहती हूँ/

सदस्यता शुल्क : वार्षिक रु. 100/-, **द्विवार्षिक शुल्क** रु. 180/-, **त्रैवार्षिक शुल्क** रु. 250/-।

(जो लागू नहीं होता, उसे कृपया काट दें)

मनीऑर्डर/ डिमांड ड्राफ्ट नम्बर..दिनांक.........................संलग्न है।

कृपया ध्यान रखें, आपका डिमांड ड्राफ्ट/मनीऑर्डर 'डॉ. अम्बेडकर फाउन्डेशन' के नाम नई दिल्ली में देय हो।

नाम (स्पष्ट अक्षरों में) ....

पता ....

....पिन ....

फोन/मोबाईल न.......................................ई.मेल: ....

इस कूपन को काटिए और शुल्क सहित निम्न पते पर भेजिए :

डॉ. अम्बेडकर फाउन्डेशन

15 जनपथ, नई दिल्ली-110 001 फोन न. 011-23320588, 23320589, 23357625

डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान राष्ट्रीय निबंध प्रतियोगिता के पुरस्कृत छात्र-छात्राओं को संबोधित करते हुए मंत्रालय के सचिव श्री सुधीर भार्गव, सचिव के सम्बोधन को गौर से सुनते हुए सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्री एवं प्रतिष्ठान के अध्यक्ष श्री थावरचंद गेहलोत एवं अन्य।

प्रतिष्ठान द्वारा प्रकाशित सी.डब्ल्यू.बी.ए. के ब्रेल लिपि संस्करण को लोकार्पित करते हुए माननीय सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्री एवं प्रतिष्ठान के अध्यक्ष श्री थावरचंद गेहलोत, मंत्रालय के सचिव श्री सुधीर भार्गव, श्रीमती स्तुति कक्कड, मंत्रालय के विशेष सचिव श्री अनूप कुमार श्रीवास्तव, संयुक्त सचिव एवं प्रतिष्ठान के सदस्य सचिव श्री संजीव कुमार।

RNI No. DELHIN/2002/9036

प्रकाशक व मुद्रक जी.के. द्विवेदी, द्वारा डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान के लिए इण्डिया ऑफसेट प्रेस, ए-1, मायापुरी इंडस्ट्रियल एरिया, फेज-I, नई दिल्ली-110064 से मुद्रित तथा डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान, 15 जनपथ, नई दिल्ली-110001 से प्रकाशित।
सम्पादक : सुधीर हिलसायन